Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग ३

(श्री वीतराग विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्डाद्वारे निर्धारित)

[मूळ हिंदीचा मराठी अनुवाद]

: लेखक व संपादक :

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न एम्. ए., पीएच्. डी.

संयुक्तमंत्री, श्री टोडरमल स्मारक भवन, जयपूर.

: प्रकाशक :

मंत्री, श्री दिगंबर जैन मुमुक्षु मंडळ.

१७३ । १७५ मुंबादेवीरोड, मुंबई-२.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम आवृति	:	२,०००
द्वितीय आवृति	:	३,२०० (१४ नवम्बर, १९८९ ई.)
योग		५,२००

अन्य भाषाओं में प्रकाशित--

हिन्दी (छह संस्करण)	:	४३,४००
गुजराती (दो संस्करण)	:	८,२००
अंग्रेजी (प्रथम संस्करण)	:	५,०००
योग		५६,६००

मूल्य : दो रुपया पचास पैसे

विषय - सूची

क्रम	पाठाचे नाव	लेखक	पृष्ठ
१.	सिद्ध पूजन	पं. हुकमचन्द भारिल्ल, जयपूर	३
२.	पूजा–विधी आणि फल	श्री. पं. प्रकाशचन्दजी 'हितैषी', दिल्ली	८
३.	उपयोग	श्री. पं. रतनचन्दजी भारिल्ल, विदिशा	११
४.	अगृहीत आणि गृहीत मिथ्यात्व	पं. हुकमचन्द भारिल्ल, जयपुर	१६
५.	मी कोण आहे ?	पं. हुकमचन्द भारिल्ल, जयपुर	२०
६.	ज्ञानी श्रावकाची बारा व्रते	श्री पं. जगन्मोहनलालजी शास्त्री, कटनी	२३
७.	मुक्तीचा मार्ग	पं. हुकमचन्द भारिल्ल, जयपुर	२९
८.	निश्चय आणि व्यवहार	पं. हुकमचन्द भारिल्ल, जयपुर	३६
९.	दशलक्षण महापर्व	श्री पं. रतनचन्दजी भारिल्ल, विदिशा	४२
१०.	बलभद्र राम	पं. हुकमचन्द भारिल्ल, जयपुर	४६
११.	समयसार स्तुती	श्री हिंमतलाल जेठालाल शाह, सोनगढ	५०

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Thanks & Our Request

This shastra has been kindly donated by Dakshaben Sanghvi, Geneva, Switzerland who has paid for it to be "electronised" and made available on the internet.

Our request to you:

1) Great care has been taken to ensure this electronic version of Vitraag Vignaan Pathmala – Part 3 (Marathi) is a faithful copy of the paper version. However if you find any errors please inform us on rajesh@AtmaDharma.com so that we can make this beautiful work even more accurate.

2) Keep checking the version number of the on-line shastra so that if corrections have been made you can replace your copy with the corrected one.

Version History

Version Number	Date	Changes
001	19 July 2008	First electronic version

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पाठ १

सिद्ध पूजन

स्थापना

चिदानन्द[1] स्वातमरसी[2], सत्[3] शिव[4] सुन्दर[5] जान ।
ज्ञाता दृष्टा लोक के, परम सिद्ध भगवान ।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपते ! सिद्धपरमेष्ठिन् ! अत्र अवतर संवौषट् । अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् ।

जल

ज्यों-ज्यों प्रभुवर जल पान किया, त्यों-त्यों तृष्णा की आग जली ।
थी आश कि प्यास बुझेगी अब, पर यह सब मृगतृष्णा निकली ।।
आशा तृष्णा से जला हृदय, जल लेकर चरणों में आया ।
होकर निराश सब जग भर से, अब सिद्ध शरण में मैं आया ।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलम् निर्वपामीति स्वाहा ।

चंदन

तन का उपचार किया अब तक, उस पर चंदन का लेप किया ।
मल-मल कर खूब नहा करके, तनके मल का विक्षेप किया ।।
अब आतम के उपचार हेतु, तुमको चंदन सम है पाया ।
होकर निराश सब जग भर से, अब सिद्ध शरण में मैं आया ।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चंदनम् नि० ।

---

१ ज्ञानानंद स्वभावी २ आपल्यामध्ये लीन राहणारे ३ सत्ता स्वरूप ४ कल्याणमयी ५ त्रैकालिक शुद्धस्वभावी ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अक्षत

सचमुच तुम अक्षत हो प्रभुवर, तुम ही अखंड अविनाशी हो।
तुम निराकार अविचल निर्मल, स्वाधीन सफल संन्यासी हो॥
ले शालिकणों का अवलम्बन, अक्षय पद ! तुमको अपनाया।
होकर निराश सब जग भर से, अब सिद्ध शरण में मैं आया॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपद प्राप्तये अक्षतम् नि०।

पुष्प

जो शत्रू, जगत का प्रबल काम, तुमने प्रभुवर उसको जीता।
हो हार जगत के वैरी की, क्यों नहिं आनंद बढे सब का॥
प्रमुदित मन विकसित सुमन नाथ, मनसिज[1] को ठुकराने आया।
होकर निराश सब जग भर से, अब सिद्ध शरण में मैं आया॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पम् नि०।

नैवेद्य

मैं समझ रहा था अब तक प्रभु, भोजन से जीवन चलता है।
भोजन विन नरकों में जीवन, भर पेट मनुज क्यों मरता है॥
तुम भोजन विन अक्षय सुखमय, यह समझ त्यागने हूँ आया।
होकर निराश सब जग भर से, अब सिद्ध शरणा में मैं आया॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०।

दीप

आलोक[2] ज्ञान का कारण है, इन्द्रिय से ज्ञान उपजता है।*
यह मान रहा था, पर क्यों कर, जड चेतन सर्जन[3] करता है॥
मेरा स्वभाव है ज्ञानमयी, यह भेद ज्ञान पा हरषाया।
होकर निराश सब जग भर से, अब सिद्ध शरण में मैं आया॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहांधकारविनाशनाय दीपम् नि०।

---

१ कामदेव २ प्रकाश ३ उत्पन्न करणे

काही मतावलंबी प्रकाशाला ज्ञानाचे कारण आणि इन्द्रियाने ज्ञानाची उत्पत्ति मानतात परंतु प्रकाश आणि इन्द्रिय अचेतन आहेत. त्याने चेतन ज्ञानाची उत्पत्ति होऊ शकत नाही.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

धूप

मेरा स्वभाव चेतनमय है, इसमें जड की कुछ गंध नहीं।
मैं हूँ अखण्ड चिद्पिण्ड चण्ड[1], पर से कुछ भी सम्बन्ध नहीं ॥
यह धूप नहीं, जड-कर्मों-की-रज आज उडाने मैं आया।
होकर निराश सब जग भरसे, अब सिद्ध शरण में मैं आया ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपम् नि० ।

फल

शुभ कर्मों का फल विषय भोग, भोगों में मानस रमा रहा।
नित नई लालसायें जागीं, तन्मय हो उनमें समा रहा ॥
रागादि विभाव किए जितने, आकुलता उनका फल पाया।
होकर निराश सब जग भरसे, अब सिद्ध शरण में मैं आया ॥

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलम् नि० ।

अर्घ

जल पिया और चन्दन चरचा, मालायें सुरभित सुमनों की–
पहनी, तन्दुल सेये व्यंजन, दीपावलियाँ की रत्नों की ॥
सुरभी[2] धूपायन की फैली, शुभ कर्मों का सब फल पाया।
आकुलता फिर भी बनी रही, क्या कारण जान नहीं पाया ॥
जब दृष्टि पडी प्रभुजी तुम पर, मुझको स्वभाव का भान हुआ।
सुख नहीं विषय भोगों में है, तुम को लख यह सद्ज्ञान हुआ ॥
जल से फल तक का वैभव यह, मैं आज त्यागने हूँ आया।
होकर निराश सब जग भरसे, अब सिद्ध शरण में मैं आया।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घपदप्राप्तये अर्घम् नि० ।

---

१ तेजस्वी २ सुगन्ध ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

जयमाला

दोहा

आलोकित हो लोक में, प्रभु परमात्म प्रकाश ।
आनन्दामृत पान कर, मिटे सभी की प्यास ।।

पद्धरी छन्द

जय ज्ञानमात्र ज्ञायक स्वरूप, तुम हो अनन्त चैतन्य रूप ।
तुम हो अखण्ड आनन्द पिण्ड, मोहारि[1] दलन[2] को तुम प्रचण्ड ।।

रागादि विकारी भाव जार[3], तुम हुए निरामय[4] निर्विकार ।
निर्द्वन्द निराकुल निराधार, निर्मम[5] निर्मल हो निराकार ।।

नित करत रहत आनंद रास, स्वाभाविक परिणति में विलास ।
प्रभु शिव रमणी के हृदय हार, नित करत रहत निज में विहार ।।

प्रभु भवदधि[6] यह गहरो अपार, बहते जाते सब निराधार ।
निज परणति का सत्यार्थभान, शिव पद दाता जो तत्त्वज्ञान ।।

पाया नहिं मैं उसको पिछान[7], उल्टा ही मैंने लिया मान ।
*चेतन को जडमय लिया जान, तन में अपनापा लिया मान ।।

शुभ-अशुभ राग जो दुःखखान, उसमें माना आनन्द महान ।
प्रभु अशुभ कर्म को मान हेय, माना पर शुभ को उपादेय ।:

जो धर्म ध्यान आनन्द रूप, उसको माना मैं दुःख स्वरूप ।
मन वांछित चाहे नित्य भोग, उनको ही माना है मनोग ।।

इच्छा निरोध की नहीं चाह, कैसे मिटता भव विषय दाह ।
आकुलता मय संसार सुख, जो निश्चय से है महा दुःख ।।

---

१ मोहरूपी शत्रु २ नाश करणे ३ जाळून ४ निरोग ५ ममता रहित
६ संसार सागर ७ ओळख

* येथून आठ ओळीमध्ये साततत्वासंबंधीच्या चूकीकडे संकेत केला आहे.

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

उसकी ही निश दिन करी आस, कैसे कटता संसार पास[1] ।
भव दुख का पर को हेतु जान, पर से ही सुख को लिया मान ।।

मैं दान दिया अभिमान ठान, उसके फल पर नहिं दिया ध्यान ।
पूजा कीनी वरदान माँग, कैसे मिटता संसार स्वाँग ।।

तेरा स्वरूप लख प्रभु आज, हो गये सफल संपूर्ण काज ।
मो उर प्रगट्यो प्रभु भेदज्ञान, मैंने तुम को लीना[2] पिछान ।।

तुम पर के कर्ता नहीं नाथ, ज्ञाता हो सब के एक साथ ।
तुम भक्तों को कुछ नहीं देत, अपने समान बस बना लेत ।।

यह मैंने तेरी सुनी आन, जो लेवे तुमको बस पिछान ।
वह पाता है केवल्य ज्ञान, होता परिपूर्ण कला निधान ।।

विपदामय परपद है निकाम, निज पद ही है आनन्द धाम ।
मेरे मन में बस यही चाह, निज पद को पाऊँ हे जिनाह ।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जयमाला अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

दोहा

पर का कुछ नहिं चाहता, चाहूँ अपना भाव ।
निज स्वभाव में थिर रहूँ, मेटो सकल विभाव ।।

पुष्पांजलि क्षिपेत्

प्रश्न :–

१. जल, नैवेद्य आणि फलाचे छन्द अर्थासहित लिहा.

२. जयमालेमधील ज्या ओळी तुम्हाला रुचकर वाटतात. त्यातीलचार ओळी अर्थासहित लिहा– तसेच त्या का रूचकर वाटतात त्याचे कारण लिहा.

---

१ बंधन २ लिया (पिछान) = ओळखले.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पाठ २

पूजा– विधी आणि फल

राजू – बाबा ! आज मंदिरात लोक गात होते. "नाथ तेरी पूजा को फल पायो, नाथ तेरी....."– पूजा म्हणजे काय ? आणि पूजेचे फल काय आहे ?

सुबोधचंद्र – इष्ट देव, शास्त्र, गुरुंचे स्तवन म्हणजेच पूजा आहे.

राजू – हे इष्टदेव कोण असतात ?

सुबोधचंद्र – मिथ्यात्व, राग-द्वेष इत्यादींचा अभाव करून पूर्ण ज्ञानी आणि सुखी होणे हेच इष्ट होत. ज्याला त्याची प्राप्ती झाली आहे तोच इष्टदेव जाणावा. अनंत चतुष्टयांचे धनी अरिहंत आणि सिद्ध भगवानच इष्टदेव आहेत आणि तेच परमपूज्य आहेत.

राजू – देवाचे स्वरूप समजले. शास्त्र आणि गुरु कशामुळे पूज्य आहेत ?

सुबोधचंद्र – शास्त्र खऱ्या देवाची वाणी (उपदेश) असल्यामुळे व मिथ्यात्व, राग–द्वेष इ. चा अभाव करणारे आणि खऱ्या सुखाचे मार्गदर्शक असल्यामुळे पूज्य आहे. नग्न दिगंबर भावलिंगी गुरुदेखील त्याच मार्गावरील पथिक वीतरागी सन्त असल्यामुळे पूज्य आहेत.

राजू – आमचे विद्यागुरु, माता, पिता इत्यादींनादेखील गुरु म्हणतात. त्यांचीही पूजा करावी काय ?

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

सुबोधचंद्र – लौकिक दृष्टीने त्यांचाही यथायोग्य आदर तर करायलाच पाहिजे परंतु त्यांच्या राग–द्वेषांचा अभाव न झाल्यामुळे मोक्षमार्गात त्यांना पूज्य मानू नये. अष्ट द्रव्यांनी पूजनीय तर वीतरागीसर्वज्ञ देव, वीतरागी मार्गाचे निरूपक शास्त्र, नग्न दिगंबर भावलिंगी गुरु हेच आहेत.

राजू – हे तर समजले की देव, शास्त्र, गुरुंची पूजा करावयास हवी, पण हे तर सांगा की यापासून लाभ काय आहे?

सुबोधचंद्र – ज्ञानी जीव लौकिक लाभाच्या हेतूने देवाची आराधना करीत नाहीत, त्याला तर सहजच देवाविषयी भक्तीचा भाव येतो. जसे धनाची इच्छा करणाऱ्यास श्रीमंतांचा महिमा कळल्याशिवाय राहत नाही, त्याचप्रमाणे वीतरागतेच्या उपासकाला अर्थात मुक्तीच्या पथिकाला मुक्तात्म्यांच्याविषयी भक्तीचा भाव येतोच.

राजू – तर काय! देवाच्या भक्तीने लौकिक (सांसारिक) सुख मिळत नाही?

सुबोधचंद्र – ज्ञानी भक्त सांसारिक सुखाची इच्छाच करीत नाहीत. परंतु शुभ भाव असल्यामुळे त्यांना पुण्यबंध अवश्य होतो आणि पुण्योदयाच्या निमित्ताने सांसारिक भोगसामुग्रीदेखील त्यांना प्राप्त होते. परंतु त्यांच्या दृष्टीत त्याला काही किमत नाही. पूजा भक्तीचा खरा लाभ तर विषय कषायापासून बचाव हाच आहे.

राजू – पूजेची पद्धती सांगा?

सुबोधचंद्र – गाळलेल्या पाण्याने स्नान करून धुतलेले वस्त्र नेसून जिन-मन्दिरात जिनेंद्र भगवंतांच्या समक्ष विनयपूर्वक उभे राहून प्रासुक द्रव्यांनी एकाग्र चित्त होवून दिवसा पूजन केले पाहिजे.

राजू – प्रासुक द्रव्य म्हणजे काय?

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सुबोधचंद्र – जीव-जंतूंनी रहित शुद्ध अचित्त पदार्थच पूजेसाठी प्रासुक द्रव्ये होत. जसे–उगवू शकणार नाही असे धान्य. तांदूळ, सुकलेली फळे, बदाम इत्यादी आणि शुद्ध गाळलेले पाणी इत्यादी.

राजू – द्रव्याशिवाय पूजन होऊ शकत नाही काय ?

सुबोधचंद्र – का नाही ? पूजेमध्ये तर परिणामाचीच मुख्यता असते. गृहस्थावस्थेमध्येदेखील काही लोकांना द्रव्याशिवाय पूजनाचे भाव होतात. काहींना अष्टद्रव्याने पूजन करण्याचे भाव होतात. तर काहींना एक किंवा दोन द्रव्यांनीसुद्धा पूजन करण्याचे भाव होतात.

राजू – हे तर समजले, पण पूजेचा पूर्ण विधी लक्षात आला नाही.

सुबोधचंद्र – तुम्ही तर येथेच उभे राहून सर्व समजून घेण्याची इच्छा करता ! उद्या सकाळी माझ्याबरोबर पूजा करण्यासाठी मंदिरात चला. तेथे पूजा पाहून सर्व विधी आपोआप लक्षात येईल.

राजू – होय ! होय ! अवश्य येईन. मला फक्त विधीच समजून घ्यावयाचा नाही. मीदेखील दररोज पूजा करीत जाईन.

सुबोधचं – तुमचा विचार चांगला आहे. सांसारिक आकुलता व अशुभ भाव यांच्यापासून बचाव होण्यासाठी हादेखील एक उपाय आहे.

प्रश्न–

१. पूजा कशाला म्हणतात ! पूजा कोणाची केली जाते ? व का ?
२. पूजेचे फळ काय आहे ? ज्ञानी श्रावक देवाची पूजा का करतो ?
३. प्रासुक द्रव्य कशास म्हणतात ? द्रव्याशिवाय पूजन होऊ शकत नाही काय ?

---

१. शिक्षकांनी वरील पाठ शिकविताना विद्यार्थ्यांना योग्य वेळी मंदिरात नेऊन पूजेचा पूर्ण विधी प्रयोगात्मक रीतीने समजावून सांगावयास पाहिजे.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

पाठ ३

उपयोग

आचार्य गृद्धपिच्छ उमास्वामी

(व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व)

तत्त्वार्थसूत्रकर्त्तारं गृद्धपिच्छोपलक्षितम् ।
वन्दे गणींद्रसंजातमुमास्वामीमुनीश्वरम् ।।

कमीत कमी लिहून जास्तीत जास्त प्रसिद्धी प्राप्त करणाऱ्या आचार्य गृद्धपिच्छ उमास्वामींच्या तत्त्वार्थ–सूत्राशी जैन समाजाचा जेवढा अधिक परिचय आहे. तेवढाच त्यांच्या लौकिक जीवनासंबंधी समाज अपरिचित आहे.

हे कुन्दकुन्दाचार्यांचे पट्ट शिष्य होते आणि विक्रम संवत पहिल्या शताब्दीच्या अंतीम काळात व द्वितीय शताब्दीच्या पूर्वार्धात भारत–भूमीला पवित्र करीत होते,

आचार्य गृद्धपिच्छ उमास्वामींची त्या गौरवशाली आचार्यांमध्ये गणना होते, की ज्यांना सर्व आचार्य परंपरेमध्ये पूर्ण प्रामाणिकता आणि सन्मान प्राप्त आहे. जे महत्त्व वैदिकांमध्ये गीतेचे, ख्रिश्चनांमध्ये बायबलचे आणि मुसलमानात कुराणाचे मानले जाते तेच महत्त्व जैन परंपरेमध्ये गृद्धपिच्छ उमास्वामींच्या तत्त्वार्थसूत्रास प्राप्त आहे. याचे दुसरे नांव मोक्षशास्त्र असे पण आहे. हा संस्कृत भाषेतील सर्वप्रथम जैन ग्रंथ आहे. या महान ग्रंथावर संस्कृत, हिन्दी इत्यादी अनेक भाषांमध्ये अनेक विस्तृत आणि गंभीर टीका व भाष्य लिहिले गेले आहेत.

पुढील पाठ तत्त्वार्थ–सूत्राच्या आधारावर लिहिला आहे.

उपयोग

दर्शनलाल – पहा ज्ञानचंद ! हे माझ्या लक्षात येत नाही की, वाबांनी आपली नावे कोठून निवडली आहेत ?

ज्ञानचंद – अरे ! तुम्हाला माहित नाही ही दोन्ही नावे धार्मिक दृष्टीने पूर्ण सार्थक आहेत. आपल्या आत्म्याचे स्वरूपच ज्ञान–दर्शनमय आहे. मोक्षशास्त्रात लिहिले आहे. " उपयोगोलक्षणम् " ॥२॥८॥ अर्थात जीवाचे लक्षण उपयोग आहे आणि ज्ञान-दर्शनाच्या व्यापाराला अर्थात् कार्यालाच उपयोग म्हणतात.

दर्शनलाल – अरे वा: ! असे आहे का ? मला तर ही नावे मोठी विचित्र वाटतात.

ज्ञानचंद – तुम्ही बरोबर बोललात. जोपर्यंत एखादी गोष्ट कधी ऐकली नाही, कधी जाणली नाही, तोपर्यन्त असेच होते. आचार्य कुन्दकुन्द स्वामींनी पण लिहिले आहे. " या जीवाने विषय–कषायाच्या गोष्टी तर खूप ऐकल्या, त्यांचा परिचय केला आणि त्यांचा अनुभव घेतला म्हणून त्या सरळ वाटतात. परन्तु आत्म्याची कथा आजपर्यंत ऐकली नाही, तिचा परिचय केला नाही, आणि आत्म्याचा अनुभव सुद्धा केला नाही. म्हणून विचित्र वाटते.

दर्शनलाल – ज्ञानचंद ! आपण आत्म्याचे लक्षण असलेल्या या उपयोगाचा थोडा जास्त खुलासा करून समजावून सांगा म्हणजे कमीत कमी आपल्या नावाचे रहस्य तरी मी जाणू शकेन.

ज्ञानचंद – चांगली गोष्ट आहे, ऐका.

चैतन्या बरोबर संबंध ठेवणाऱ्या जीवाच्या (अनुविधायी) परिणामाला उपयोग म्हणतात, आणि उपयोगालाच ज्ञान–दर्शन म्हणतात. हे ज्ञान–दर्शन सर्व जीवामध्ये असते. आणि जीवांशिवाय दुसऱ्या कोणत्याही द्रव्यात राहात नाही. म्हणून हे जीवाचे लक्षण होय, यामुळेच जीवांची ओळख होते. या उपयोगाचे मुख्य दोन भेद आहेत.

(१) दर्शनोपयोग (२) ज्ञानोपयोग

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

दर्शनलाल – दर्शनोपयोग आणि ज्ञानोपयोग यांच्यात काय अंतर आहे? हे समजावून सांगा.

ज्ञानचंद – ज्यामध्ये सामान्याचा प्रतिभास (निराकार अवलोकन) असतो त्यास दर्शनोपयोग म्हणतात. आणि ज्यामध्ये स्व-पर पदार्थांचे भिन्नतापूर्वक अवभासन होते त्या उपयोगास ज्ञानोपयोग म्हणतात.

दर्शनलाल – सगळ्या जीवांचे ज्ञान एकसारखे असत नाही ना ?

ज्ञानचंद – होय ! शक्तीच्या अपेक्षेने सर्वांमध्ये ज्ञानगुण समानच आहे. पण वर्तमान कालीन विकासाच्या अपेक्षेने ज्ञानाचे मुख्य रूपाने ८ भेद होतात.

(१) मतिज्ञान (२) श्रुतज्ञान (३) अवधिज्ञान
(४) मनःपर्यय ज्ञान (५) केवलज्ञान (६) कुमतिज्ञान
(७) कुश्रुतज्ञान (८) कुअवधिज्ञान,

दर्शनलाल – मतिज्ञान, श्रुतज्ञान इत्यादींचे काय तात्पर्य ?

ज्ञानचंद – पराश्रयाची बुद्धी सोडून दर्शनोपयोगपूर्वक स्वसन्मुखतेने प्रगट होणाऱ्या निज आत्म्याच्या ज्ञानाला मतिज्ञान म्हणतात किंवा इंद्रिये व मनाच्या निमित्ताने होणाऱ्या ज्ञानाला मतिज्ञान म्हणतात. आणि मतिज्ञानाने जाणलेल्या पदार्थांच्या संबंधाने अन्य पदार्थांना जाणणाऱ्या ज्ञानास श्रुतज्ञान म्हणतात.

इंद्रिये व मन यांच्या निमित्ताशिवाय आणि द्रव्य क्षेत्र काल भाव यांच्या मर्यादेमध्ये रूपीपदार्थांच्या स्पष्ट ज्ञानाला अवधिज्ञान म्हणतात.

दर्शनलाल – आणि मनःपर्यय ज्ञान ?

ज्ञानचंद – ऐका ! सगळे सांगतो. ज्ञानी मुनिराजांना इंद्रिय व मनाच्या निमित्ताशिवाय द्रव्य, क्षेत्र, काल आणि भाव यांच्या मर्यादेमध्ये दुसऱ्याच्या मनामध्ये असणाऱ्या रूपी विषयाबद्दल होणाऱ्या स्पष्ट ज्ञानाला मनःपर्ययज्ञान म्हणतात. आणि जे तीन लोक आणि तिन्ही कालवर्ती सगळ्या पदार्थांना व त्यांच्या सर्व गुण व सर्व पर्यायांना आणि अपेक्षित धर्मांना प्रत्येक समयाला स्पष्ट आणि एकाचवेळी जाणते, अशा पूर्ण ज्ञानाला केवलज्ञान म्हणतात.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

दर्शनलाल – हे तर ठीक आहे. परंतु कुमति इत्यादींना पण ज्ञान म्हणावे काय ?

ज्ञानचंद – आत्मस्वरूप न जाणणाऱ्या मिथ्यादृष्टीला जी मति, श्रुत, अवधि ज्ञाने असतात त्यांना कुमति, कुश्रुत व कुअवधि म्हणतात. कारण मूलतत्त्वांबद्दल विपरीत श्रद्धा असल्यामुळे त्यांचे ज्ञान मिथ्या असते, त्याचे अप्रयोजनभूत लौकिकज्ञान यथार्थ असले तरी प्रयोजनभूततत्त्वज्ञान यथार्थ नसल्यामुळे त्यांची त्याचे सर्व ज्ञाने मिथ्या ज्ञाने होत.

दर्शनलाल – दर्शनोपयोगाचे पण काही भेद आहेत काय ?

ज्ञानचंद – होय आहेत ! दर्शनोपयोग ४ प्रकारचा असतो.

(१) चक्षुदर्शन (२) अचक्षुदर्शन
(३) अवधिदर्शन (४) केवलदर्शन

दर्शनलाल – चक्षुदर्शन बरोबर आहे, म्हणजे डोळयांनी पाहणे पण अचक्षुदर्शन काय आहे ?

ज्ञानचंद – अरे बाबा असे नाही.

चक्षुरिंद्रियाच्या निमित्ताने होणाऱ्या मतिज्ञानाच्या पूर्वी (अगोदर) जो सामान्य प्रतिभास किंवा अवलोकन होते त्यास चक्षुदर्शन म्हणतात, आणि चक्षुरिंद्रियास सोडून बाकीची चार इंद्रिये व मन यांच्या निमित्ताने होणाऱ्या मतिज्ञानाच्या अगोदर होणाऱ्या सामान्य प्रतिभासाला अचक्षुदर्शन म्हणतात.

दर्शनलाल – फार छान ! आणि अवधिदर्शन ?

ज्ञानचंद – याचप्रकारे अवधिज्ञानापूर्वी होणाऱ्या सामान्य प्रतिभासाला अवधिदर्शन म्हणतात, परंतु केवलदर्शनामध्ये काही विशेषता आहे.

दर्शनलाल – ती कोणती ?

ज्ञानचंद – केवलज्ञानाबरोबर होणाऱ्या सामान्य प्रतिभासाला आणि अवलोकनाला केवलदर्शन म्हणतात. केवलदर्शन व केवलज्ञान यांच्यात समयभेद नसतो.

दर्शनलाल – वा ! वा ! ! छान समजाविले !

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

उपयोगाचे भेद

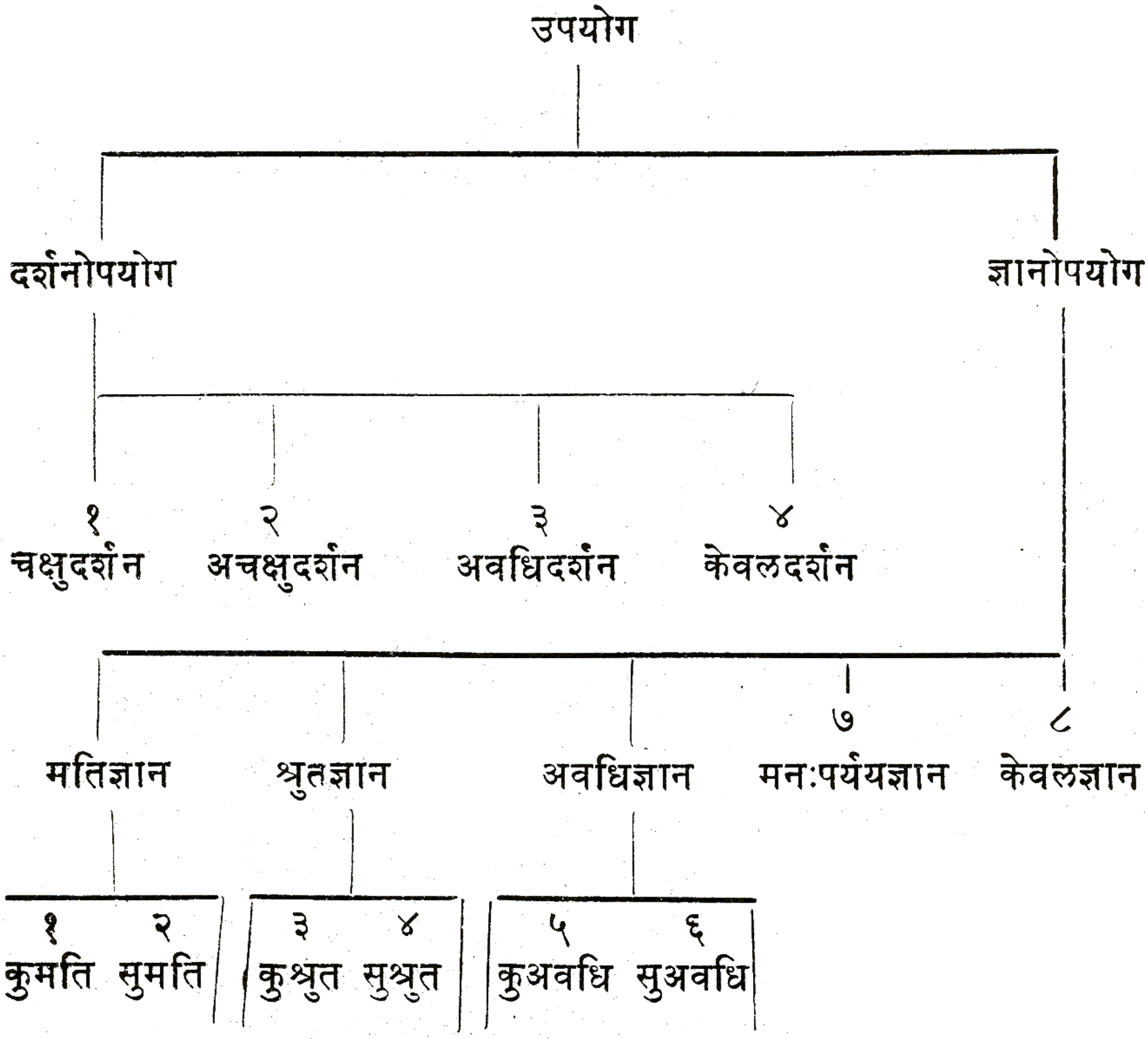

प्रश्न :–

१. उपयोग कशास म्हणतात ? तो किती प्रकारचा आहे ? भेद–प्रभेदांसहित सांगा.

२. दर्शनोपयोग आणि ज्ञानोपयोग यांच्यात काय अन्तर आहे ? स्पष्ट करा.

३. खाली दिलेल्या पैकी कोणत्याही दोन व्याख्या लिहा– मतिज्ञान, केवलदर्शन, चक्षुदर्शन, केवलज्ञान.

४. आचार्य उमास्वामींच्या व्यक्तित्व आणि कर्तृत्वावर प्रकाश टाका.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

पाठ ४

अगृहीत आणि गृहीत मिथ्यात्व

अध्यात्मप्रेमी पं. दौलतरामजी

व्यक्तित्व आणि कर्तृत्व

(संवत् १८५५– १९२३)

अध्यात्म–रसात निमग्न राहणारे एकोणिसाव्या शतकामधील तत्त्वदर्शी विद्वान कविवर पं. दौलतरामजी पल्लीवाल जातीचे नररत्न होते. त्यांचा जन्म अलीगढजवळील सासनी गावात झाला. नंतर ते काही दिवस अलीगढ येथेसुद्धा राहिले होते. त्यांच्या वडीलांचे नाव टोडरमलजी होते.

आत्मप्रशंसेपासून दूर राहणाऱ्या या कवीचा जीवनपरिचय अजून पूर्णपणे प्राप्त झाला नाही. पण ते एक साधारण गृहस्थ होते आणि सरळ स्वभावी आत्मज्ञानी पुरुष होते.

त्यांनी रचलेला छहढाला हा जैन समाजाचा अति परिचित आणि अत्यंत आदरास प्राप्त असा ग्रंथरत्न आहे. छहढालेचा अभ्यास न करणारे क्वचितच जैन बंधू असतील. सगळ्या जैन परीक्षा बोर्डांच्या पाठ्यक्रमामध्ये याला स्थान प्राप्त झाले आहे.

याची रचना पं. दौलतरामजींनी संवत् १८९१ मध्ये केली होती. त्यांनी यात "गागर में सागर" भरण्याचा सफल प्रयत्न केला आहे. याशिवाय त्यांनी अनेक स्तुती आणि अध्यात्म रसाने ओतप्रोत भजने लिहिली आहेत, जी आजही भारतातील सर्व शास्त्र–सभामध्ये दररोज म्हटली जातात. त्यांच्या भजनात फक्त भक्तीच नाही, गूढ तत्त्वपण भरलेले आहे.

भक्ती आणि अध्यात्मरसाबरोबरच त्यांच्या काव्यातकाव्यप्रतिभादेखील प्रौढतेस प्राप्त झाली आहे. भाषा सरळ, सुबोध प्रवाही आहे, छंदपूर्तीसाठी उगीचच शब्द वापरलेले नाहीत. यांची पदे हिन्दी गीत साहित्याच्या कोणत्याही विद्वानापुढे मोठ्या अभिमानाने ठेवता येण्यासारखी आहेत.

पुढील पाठ या छहढालेच्या दुसऱ्या ढालीवर आधारित आहे.

अगृहीत आणि गृहीत मिथ्यात्व

विद्यार्थी – छहढालेमध्ये कोणाची कथा आहे ?

शिक्षक – आमची, तुमची आणि सर्वांची कथा आहे. त्यात जीवांच्या संसारभ्रमणाची कथा आहे. हा जीव अनंत काळापासून चारी गतींमध्ये भ्रमण करीत आहे, पण याला कोठेच सुख प्राप्त झाले नाही. पहिल्या ढालीत हेच तर सांगितले आहे.

विद्यार्थी – हा संसारात का फिरतो आणि कोणत्या कारणाने दुःखी आहे ?

शिक्षक – याच प्रश्नाचे उत्तर दुसऱ्या ढालीत दिले आहे.

ऐसे मिथ्या दृग-ज्ञान-चरण,
वशभ्रमत भरत दुःख जन्म मरण ॥१॥

हा जीव मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान आणि मिथ्याचारित्राच्या आधीन होऊन संसारामध्ये भ्रमण करीत जन्म-मरणाचे दुःख भोगतो आहे.

विद्यार्थी – ज्यांच्यामुळे सर्व दुःखी आहेत असे हे मिथ्यादर्शन, ,मिथ्याज्ञान आणि मिथ्याचारित्र काय आहे ?

शिक्षक – जीवादी सात तत्त्वांची विपरीत श्रद्धा म्हणजेच मिथ्यात्व होय. यालाच मिथ्यादर्शनदेखील म्हणतात. जीव, अजीव आदी सात तत्त्वे जी अगोदर तुम्ही शिकलात ना, त्यांना ती जशी आहेत तसे न मानता अन्यथा मानणेच विपरीत श्रद्धा होय. म्हटलेच आहे–

जीवादी प्रयोजनभूत तत्त्व,
सरधै तिनमाँहि विपर्ययत्व ॥२॥

विद्यार्थी – या मिथ्यात्वाच्या चक्रामध्ये आम्ही केव्हापासून अडकलो आहोत ?

शिक्षक – जेव्हापासून आम्ही आहोत तेव्हापासूनच म्हणजे अनादी काळापासून आम्ही या चक्रात अडकलो आहोत. या मिथ्यात्वाला बाह्य कारणांनी पुन्हा अधिकच पुष्ट करीत आहोत. मिथ्यात्व दोन प्रकारचे आहे. एक अगृहीत मिथ्यात्व आणि दुसरे गृहीत मिथ्यात्व.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

विद्यार्थी – गृहीत आणि अगृहीत काय आहे ?

शिक्षक – शिकविल्याशिवाय अनादी काळापासूनच शरीर, रागादी परपदार्थांमध्ये जी अहंबुद्धी आहे ते अगृहीत मिथ्यात्व आहे आणि कुदेव, कुगुरु आणि कुशास्त्र यांच्या उपदेशादीने अन्यथा मान्यता अधिक पुष्ट होते त्यास गृहीत मिथ्यात्व म्हणतात. अगृहीत म्हणजे ग्रहण न केलेले व गृहीत म्हणजे ग्रहण केलेले.

विद्यार्थी – असेच गृहीत अगृहीत मिथ्याज्ञानाचेपण भेद होत असावेत ?

शिक्षक – होय ! होय ! असेच आहे. जीवादी तत्त्वांबद्दल अनादीकाळापासून जी अज्ञानता आहे. तीच अगृहीत मिथ्याज्ञान आहे आणि ज्यामध्ये विपरीत वर्णनाद्वारे रागादीचे पोषण केले आहे. त्या शास्त्राला खरे मानून त्यांचे अध्ययन करणे गृहीत मिथ्याज्ञान आहे.

विद्यार्थी – मिथ्याचारित्राचेही असेच भेद समजावेत काय ?

शिक्षक – समजावेत काय ! आहेत मुळी. अज्ञानी जीवांची विषयामध्ये प्रवृत्ती हेच अगृहीत मिथ्याचारित्र आहे, आणि प्रशंसावगैरेच्या लोभाने जो बाह्याचार पाळला जातो ते गृहीत मिथ्याचारित्र आहे. आत्मा (जीव) अनात्मा (अजीव) यांच्या ज्ञान आणि श्रद्धानाशिवाय बाह्यक्रियाकांड सर्व व्यर्थ आहे. म्हटलेच आहे–

जो ख्याति लाभ पूजादि चाह,
धरि करन विविध विध देह दाह ।
आतम अनातम के ज्ञानहीन,,
जे जे करनी तन करन छीन ॥१४॥

विद्यार्थी – अज्ञानी जीवांच्या सगळ्या क्रिया अधर्म का म्हणून ? ज्या चांगल्या आहेत, त्यांना तर धर्म म्हणावयास हवे.

शिक्षक – याचेच उत्तर देताना पं. दौलत रामजी म्हणतात

रागादि भाव हिंसा समेत,
दर्वित त्रस थावर मरण खेत ।
जे क्रिया तिन्है जानहु कुधर्म,
तिन सरधै जीव लहै अशर्म ॥१२॥

अंतरंगात उत्पन्न होणाऱ्या राग–द्वेषरूप भावहिंसा आणि त्रस व स्थावर यांच्या घातरूप द्रव्यहिंसा यांनी सहित जेवढ्या क्रिया आहेत, त्यांना धर्म मानणे कुधर्म होय. यावर श्रद्धा ठेवल्याने जीव दुःखी होतो.

विद्यार्थी – यापासून वाचण्याचा काय उपाय आहे ?

शिक्षक – देव शास्त्र गुरुंचे खरे स्वरूप समजून गृहीत मिथ्यात्वापासून हा जीव वाचू शकतो आणि जीवादी तत्त्वांची खरी ज्ञानपूर्वक आत्मानुभूती करून अगृहीत मिथ्यात्वाला दूर करता येते

विद्यार्थी – तर यांचे स्वरूप सांगा ना ?

अध्यापक – आता नाही नतर केव्हा तरी––.

प्रश्न :–

१. जीव दुःखी का आहे ? दुःखापासून सुटका होऊ शकते काय ? जर होय तर कशी ?

२. गृहीत आणि अगृहीत मिथ्यात्व यांच्यात काय नंतर आहे? स्पष्ट करा.

३. रागादी पोषक शास्त्रांचे अध्ययन करणे गृहीत मिथ्याज्ञान आहे काय ?

४. संयमी लोकांची जगात पूजा होते, म्हणून संयम धारण करावयास हवा. हे युक्तीसंगत आहे काय ? नाही तर का नाही ?

५. पं. दौलतरामजींचा परिचय द्या. त्यांच्या छहढालामधील पहिल्या व दुसऱ्या ढालीत काय सांगितले आहे ? स्पष्ट करा.

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पाठ ५

मी कोण आहे ?

'मी' ह्या शब्दाचा प्रयोग आम्ही दररोज अनेकवेळा करतो, पण आपण सूक्ष्मपणे याचा कधीच विचार करीत नाही की, 'मी' चा वास्तविक अर्थ काय ? 'मी चा खरा वाच्यार्थ काय आहे ?

'मी' शब्द कोणत्या वस्तूचा वाचक आहे ?

सामान्यरीतीने विचार करून आपण म्हणू शकतो की यात सूक्ष्मपणे विचार करण्यासारखे काय आहे ? तुम्ही म्हणाल की मी एव-ढेही जाणत नाही काय की 'मी कोण आहे ?' आणि उत्तरही देऊ शकतो की, " मी बालक आहे किंवा तरूण आहे, मी पुरुष आहे किंवा स्त्री आहे, विद्वान आहे किंवा सेठ आहे. पण माझा प्रश्न हा आहे की आपण याशिवाय आणखी काहीच नाही काय ? ह्या सगळ्या तर फक्त बाहेरून दिसणाऱ्या संयोगी पर्यायी (अवस्थामात्र) आहेत.

माझे म्हणणे आहे की, जर आपण बालक आहात तर बालपण एक दिवस संपणार आहे पण आपण तर नंतरसुद्धा राहाल, म्हणून आपण बालक होऊ शकत नाही. याचप्रकारे तरुणही होऊ शकत नाही. कारण बालपण तारुण्य हे तर शरीराचे धर्म आहेत. आणि 'मी' शब्द शरीराचा वाचक नाही. मला विश्वास आहे की, आपणसुद्धा स्वतःला शरीर मानीत नसाल.

असेच आपण सेठ तर धनाच्या-संयोगाने आहात म्हणून जेव्हा धन राहणार नाही, तेव्हा आपणसुद्धा राहणार नाही काय ? तसेच विद्वत्ता तर शास्त्रज्ञानाला म्हणतात म्हणून जेव्हा आपणास शास्त्रज्ञान नव्हते तेव्हा आपण नव्हता काय ? जर होता, तर हे लक्षात येते की आपण धन आणि विद्वत्तेपासूनसुद्धा भिन्न आहात अर्थात आपण सेठ किंवा विद्वान नाहीत.

तेव्हा प्रश्न उपस्थित होतो की शेवटी 'मी आहे कोण ?' जर एकवेळ हा प्रश्न अतरंग तळमळीतून उपस्थित झाला आणि त्याच्या समाधानाची खरी जिज्ञासा जागृत झाली तर याचे उत्तर मिळणे कठीण नाही. परन्तु हा 'मी' पराच्या शोधात स्वतःला विसरतो

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

आहे. किती विचित्र गोष्ट आहे की शोधणारा स्वतः शोधणाऱ्याला विसरतो आहे. सर्व जग पराचा सांभाळ करण्यामध्ये एवढे व्यस्त आहे की "मी कोण आहे" हे समजण्यासाठी त्याला वेळच नाही.

'मी' शरीर, मन, वाणी आणि मोह–राग–द्वेष एवढ्यापुरता मर्यादित नाही येवढेच नव्हे तर क्षणिक परलक्ष्यी बुद्धीपासून भिन्न एक त्रैकालिक, शुद्ध अनादी अनंत, चैतन ज्ञानानंद स्वभावी ध्रूव तत्त्व आहे. ज्याला आत्मा म्हणतात.

जसे "मी बंगाली आहे, मी मद्रासी आहे आणि पंजाबी आहे." या प्रान्तीयतेच्या खटाटोपामध्ये मनुष्य हे विसरून जातो की "मी भारतीय आहे" आणि प्रान्तीयतेच्या विशेष अनुभूतीने भारतीय राष्ट्रीयता खण्डित होण्यास सुरुवात होते, त्याचप्रमाणे "मी मनुष्य आहे, देव आहे, पुरुष आहे, स्त्री आहे, बालक आहे, तरुण आहे" इत्यादीमध्ये आत्मभ्रमाच्या मेघाआड आत्मा झाकला जातो. जसे आजच्या राष्ट्रीय नेत्याचे म्हणणे आहे की देशप्रेमी बंधूंनो, आपण मद्रासी आणि बंगाली असण्यापूर्वी भारतीय आहात, हे का विसरता ? त्याचप्रमाणे माझे म्हणणे आहे की, "मी सेठ आहे, मी विद्वान आहे, मी बालक आहे, मी वृद्ध आहे,' यांच्या कोलाहलात 'मी आत्मा आहे' हे आम्ही का विसरतो ?

जसे भारत देशाची अखण्डता अक्षुण्ण ठेवण्यासाठी हे अत्यंत आवश्यक आहे की प्रत्येक भारतीयांमध्ये 'मी भारतीय आहे' ही अनुभूती प्रबल व्हावयास हवी, भारतीय एकतेसाठी वरील अनुभूतीच एकमात्र खरा उपाय आहे त्याचप्रमाणे "मी कोण आहे ?" चे खरे उत्तर मिळविण्यासाठी "मी आत्मा आहे" ची अनुभूती प्रबळ होणे अती आवश्यक आहे.

स्त्री, पुत्र, घर, पैसा इतकेच नव्हे तर शरीरापासूनसुद्धा भिन्न मी तर एक चैतन्यतत्त्व आत्मा आहे. आत्म्यामध्ये उत्पन्न होणारे मोह–राग–द्वेष भावसुद्धा क्षणस्थायी विकारी भाव असल्यामुळे आत्म्याच्या कक्षेत येत नाहीत आणि परलक्ष्यी ज्ञानाचा अल्पविकाससुद्धा परिपूर्ण ज्ञानस्वभावी आत्म्याचे ज्ञान करून देण्यास समर्थ नाही. येथपर्यंत की, ज्ञानाची पूर्ण विकसित अवस्था, अनादी नसल्यामुळे, अनादी अनंत पूर्ण एक ज्ञानस्वभावी आत्मा होऊ शकत नाही. कारण आत्मा तर एक द्रव्य आहे. आणि ही अवस्था म्हणजे आत्म्याच्या ज्ञानगुणाची पूर्ण विकसित एक पर्यायमात्र आहे.

"मी"चा वाच्यार्थ "आत्मा" तर अनादी अनंत अविनाशी

त्रैकालिक तत्त्व आहे. जोपर्यंत त्या ज्ञानस्वभावी अविनाशी ध्रुवतत्त्वामध्ये अहंबुद्धी ('तोच मी आहे ' अशी मान्यता) होत नाही तोपर्यंत "मी कोण आहे ?" हा प्रश्न अनुत्तरितच राहील.

"मी "च्या द्वारे ज्या आत्म्याचे कथन केले जाते, तो आत्मा अन्तरोन्मुखी दृष्टीचा विषय आहे, अनुभवगम्य आहे, बहिर्लक्षी धावपळीने तो प्राप्त होऊ शकणार नाही, तो स्वसंवेद्य तत्त्व आहे, म्हणून त्याला मानसिक विकल्पामध्ये बांधले जाऊ शकत नाही, त्याला इंद्रियांद्वारेसुद्धा प्राप्त करता येणार नाही. कारण इंद्रिये तर केवळ स्पर्श, रस, गंध, वर्ण आणि शब्द यांची ग्राहक आहेत. म्हणून ती स्पर्श, रस, गंध, वर्ण असणाऱ्या जडतत्त्वालाच जाणण्यामध्ये निमित्त मात्र आहेत. ती इंद्रिये अरस, अरूपी आत्म्याला जाणण्यामध्ये निमित्तसुद्धा होऊ शकत नाहीत.

ही अनुभवगम्य आत्मवस्तु ज्ञानाचा घनपिण्ड आणि आनन्दाचा कंद आहे. रूप, रस, गंध, स्पर्श आणि मोह–राग–द्वेष इत्यादी सगळ्या पर भावांपासून भिन्न, सर्वांग परिपूर्ण शुद्ध आहे. सर्व परभावांपासून भिन्नता आणि ज्ञानादीमय भावांपासून अभिन्नता हीच आत्म्याची शुद्धता आहे. आत्मा एक आहे, अनंत गुणांची अखण्डताच आत्म्याची एकता आहे. असा हा आत्मा फक्त आत्मा आहे आणखी काही नाही, म्हणजेच ' मी ' मीच आहे, आणखी काही नाही. 'मी' मीच आहे आणि स्वत:मध्येच परिपूर्ण आहे. दुसऱ्याला देण्यासारखे माझ्यात काही नाही, आणि स्वत: परिपूर्ण असल्यामुळे पराच्या सहकार्याची मला कोणतीच आवश्यकता नाही. हा आत्मा वाग्विलास आणि शब्दजाल यांच्यापासून वेगळा आहे, फक्त अनुभूतीगम्य आहे. आत्मानुभूती प्राप्त करण्याचा प्रारंभिक उपाय तत्त्वविचार हाच आहे, पण ती आत्मानुभूती आत्मतत्त्वासंबंधीच्या विकल्पाचासुद्धा अभाव करून प्रगट होणारी स्थिती आहे

"मी कोण आहे" ही जाणण्याची वस्तू आहे, हे अनुभूतीद्वारे प्राप्त होणारे समाधान (उत्तर) आहे. ही वचनाद्वारे व्यक्त करण्यासारखी आणि लेखणीद्वारे लिहिण्यासारखी वस्तू नाही. वाणी आणि लेखणी यांची या संदर्भामध्ये एवढीच उपयोगिता आहे की, ह्या त्या वस्तूकडे (आत्म्याकडे) संकेत करूं शकतात. दिग्दर्शन करू शकतात परंतु दशा प्राप्त करून देऊ शकत नाही.

प्रश्न :–

१. "मी कोण आहे ?" ह्या विषयावर आपल्या भाषेत एक निबंध लिहा.

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पाठ ६

ज्ञानी श्रावकाची बारा व्रते

(पंचम गुणस्थानवर्ती)

ज्यास यथार्थ सम्यग्दर्शन प्रगट झाले आहे, त्यालाच ज्ञानी म्हणतात. असा ज्ञानी जीव जेव्हा अनंतानुबंधी आणि अप्रत्याख्यानावरण कषायाच्या उदयाच्या अभावामध्ये स्वत:मध्ये देशचारित्रस्वरूप आत्मशुद्धी प्रगट करतो तेव्हा त्याला व्रती श्रावक म्हणतात

प्रगट झालेल्या आत्मशुद्धीला निश्चय व्रत म्हणतात. आणि या आत्मशुद्धीच्या सद्‌भावामध्ये जे हिंसादी पाच पापांच्या त्यागाचे आणि अहिंसादी पाच अणुव्रतांना धारण करण्याचे शुभ भाव होतात, त्यांना व्यवहार व्रत म्हणतात. अशा प्रकारचे शुभ भाव ज्ञानी श्रावकामध्ये सहज रूपाने प्रगट होतात.

श्रावकांची व्रते बारा प्रकारची आहेत. त्यापैकी हिंसादी पाच पापांच्या आंशिक त्यागाला अणुव्रते म्हणतात. ही पाच आहेत. या अणुव्रतांचे रक्षण करणारी व त्यांच्यात अभिवृद्धी करणारी तीन गुणव्रते आणि महाव्रतांच्या अभ्यास रूप चार शिक्षाव्रते आहेत

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पाच अणुव्रते

१. अहिंसाणुव्रत– हिंसाभावाच्या स्थूल रूपातील त्यागाला अहिंसाणुव्रत म्हणतात. अहिंसाणुव्रत समजण्यासाठी प्रथम हिंसा म्हणजे काय हे समजले पाहिजे. कषाय भाव उत्पन्न झाल्यानंतर आत्म्याच्या उपयोगाच्या शुद्धतेचा घात होणे, भावहिंसा आहे. आणि हे कषाय भाव ज्यात निमित्त आहेत अशा आपल्या व दुसऱ्यांच्या द्रव्यप्राणांचा घात म्हणजे द्रव्यहिंसा होय.

श्री. अमृतचंद्राचार्यांनी पुरुषार्थसिद्ध्युपाय नामक ग्रंथात लिहिले आहे. *–

"आत्म्यामध्ये रागादी दोषांचे उत्पन्न होणेच हिंसा आहे. आणि त्यांचे उत्पन्न न होणे अहिंसा आहे."

जर एखादी व्यक्ती राग-द्वेषादी भाव न करता समीचीन आचरण करील आणि सावधानी ठेवूनही एखाद्या जीवाचा घात झाला, तर ती हिंसा नाही. याविरुद्ध एखादा जीव अंतरंगात कषायभाव ठेवील आणि बाह्याचरणामध्येसुद्धा असावधान राहील आणि त्याच्याकडून एखाद्या जीवाचा घातसुद्धा झाला नाही तरी तो हिंसक आहे. सारांश हा आहे की, हिंसा आणि अहिंसा यांचा निर्णय प्राण्यांच्या मरण्या किंवा न मरण्याशी नाही तर रागादी भावांच्या उत्पत्ती अनुत्पत्तीशी आहे.

निमित्त भेदाच्या अपेक्षेने हिंसा चार प्रकारची आहे.

(१) संकल्पी हिंसा (२) उद्योगी हिंसा

(३) आरंभी हिंसा (४) विरोधी हिंसा

केवळ निर्दयी परिणामाने संकल्पपूर्वक (उद्देश) केलेल्या प्राणघातालाच संकल्पी हिंसा म्हणतात.

व्यापारादी कार्यांमध्ये आणि गृहस्थाच्या आरंभादी कार्यांमध्ये सावधानी ठेवली असताना जी हिंसा होते, ती उद्योगी आणि आरंभी हिंसा आहे.

अप्रादुर्भाव : खलु रागादीनां भवत्यहिंसेति ।
तेषामेवोत्पत्ति हिंसेति जिनागमस्य संक्षेप ।।४४।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

आपल्यावर किंवा आपल्या कुटुंबियांवर तथा धर्मायतनावर होणाऱ्या आक्रमणापासून रक्षण करण्यासाठी केली जाणारी अनिच्छापूर्वक हिंसा म्हणजे विरोधी हिंसा होय.

व्रती श्रावक वरील चार प्रकारच्या हिंसेपैकी संकल्पी हिंसेचा पूर्णपणे त्यागी असतो. अर्थात् सहज रूपाने त्याचे या प्रकारचे भावच उत्पन्न होत नाहीत. बाकीच्या तीन प्रकारच्या हिंसेपासूनसुद्धा यथाशक्ती तो अलिप्त राहण्याचा प्रयत्न करतो. हिंसाभावाचा एक देश (आंशिक) त्याग असल्यामुळे हे व्रत अहिंसाणुव्रत म्हटले जाते.

२. सत्याणुव्रत :- प्रमादपूर्वक असत् वचन बोलणे असत्य पाप आहे, याचा एकदेश त्याग म्हणजेच सत्याणुव्रत होय, असत्याचे चार प्रकार पडतात.

(१) सत् चा अपलाप (२) असत् चे उद्‌भावन
(३) अन्यथा प्ररूपण (४) गर्हित वचन

विद्यमान पदार्थास अविद्यमान म्हणणे सत्‌चा अपलाप होय.

अविद्यमान पदार्थाला विद्यमान म्हणणे असत्‌चे उद्‌भावन आहे.

वस्तूचे स्वरूप जसे आहे तसे न सांगता वेगळेच सांगणे म्हणजे अन्यथा प्ररूपण आहे. जसे- हिंसा म्हणजे धर्म आहे हे सांगणे.

निंदनीय, कलहकारक, पीडाकारक, शास्त्रविरूद्ध, हिंसापोषक, परापवादकारक आदी वचनांना गर्हित वचन म्हणतात.

३ अचौर्याणुव्रत- ज्या वस्तुमध्ये देण्याघेण्याचा व्यवहार होतो, अशा वस्तुला प्रमादपूर्वक तिच्या मालकाच्या अनुमतीशिवाय ग्रहण करणे चोरी होय. अशा चोरीचा त्याग अचौर्यव्रत आहे. चोरीचा त्यागी असतानासुद्धा गृहस्थ विहीर नदी इ. मधून पाणी आणि खाणी मधून माती इ. वस्तू परवानगीशिवाय ग्रहण करू शकतो. म्हणून एकदेश चोरीचा त्यागी असल्यामुळे अचौर्याणुव्रत म्हटले जाते.

४.ब्रम्हचर्याणुव्रत- स्त्री - सेवनाच्या पूर्णतया त्यागाला ब्रम्हचर्यव्रत म्हणतात. जे गृहस्थ यास धारण करण्यास असमर्थ आहेत ते स्वस्त्रीमध्ये संतोष मानतात. आणि परस्त्रीरमणाच्या भावाचा सर्वथा त्याग करतात. त्यांचे हे व्रत एकदेशरूप असल्यामुळे ब्रम्हचर्याणुव्रत म्हटले जा.

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

५. परिग्रह परिमाणव्रत– आपल्यापासून भिन्न असणाऱ्या परपदार्थांमध्ये ममत्वबुद्धीच परिग्रह आहे. त्याचे दोन भेद आहेत. १) अंतरंग परिग्रह व बाह्यपरिग्रह..मिथ्यात्व, क्रोध, मान, माया, लोभ आणि हास्यादी नोकषाय, हे चवदा अंतरंग परिग्रहाचे भेद आहेत. आणि जमीन–घर, सोने–चांदी, धन–धान्य, दास–दासी, भांडी–वस्त्र या अन्य वस्तु बाह्य परिग्रह आहेत. या परिग्रहांपैकी गृहस्थाला मिथ्यात्व नावाच्या परिग्रहाचा तर पूर्णतया त्याग असतो. आणि बाकी अंतरंग परिग्रहाचा कषायअंशाच्या सद्भावामुळे एकदेश त्याग असतो व तो बाह्य परिग्रहाची सीमा निर्धारित करतो. या व्रताला परिग्रह–परिमाणव्रत म्हणतात.

गुणव्रत

दिग्व्रत, देशव्रत आणि अनर्थदंडव्रत ही तीन गुणव्रते आहेत.

१. दिग्व्रत :– कषाय काही अंशाने कमी झाल्यामुळे गृहस्थ दहा दिशांमधील प्रसिद्ध स्थानांचा आधार घेवून आपल्या जाण्यायेण्याची सीमा निश्चित करतो व जीवनपर्यंत तिचे उल्लंघन करीत नाही, यालाच दिग्व्रत म्हणतात.

२. देशव्रत :– दिग्व्रताने निश्चित केलेल्या विशाल सीमेला घटका, तास, दिवस, आठवडा, महिना इत्यादी कालमर्यादापूर्वक पुन्हा मर्यादीत करणे (कमी करणे) यास देशव्रत म्हणतात.

३. अनर्थदण्डव्रत :– प्रयोजनाशिवाय हिंसादी पापांमध्ये प्रवृत्ती करणे किंवा त्या प्रवृत्तीरूप भाव करणे अनर्थदण्ड आहे आणि त्याच्या त्यागाला अनर्थदण्डव्रत म्हणतात. व्रती श्रावक कारणाशिवाय जमीन खोदणे, पाणी सांडणे, अग्नी पेटवणे, वारा घालणे, वनस्पती तोडणे इ. कार्य करीत नाही, म्हणजेच त्रसहिंसेचा तर तो त्यागी आहेच पण अप्रयोजनीय स्थावर हिंसेचा पण त्याग करतो. राग–द्वेषादि प्रवृत्तीमध्येसुद्धा तो रमत नाही, तो यांच्यापासून विरक्त राहतो. या व्रताला अनर्थदण्डव्रत म्हणतात.

शिक्षाव्रत

सामायिकव्रत, प्रोषधोपवासव्रत, भोगोपभोग परिमाणव्रत आणि अतिथी संविभागव्रत ही चार शिक्षाव्रते आहेत.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

१. सामायिकव्रत :– संपूर्ण द्रव्यांसंबंधी असणाऱ्या राग-द्वेषांच्या त्यागपूर्वक समताभावाचे अवलम्बन करून आत्मभावाची प्राप्ती करणे हेच सामायिक आहे. व्रती श्रावकांनी सकाळी, दुपारी व सायंकाळी कमीत कमी एक अन्तर्मुहूर्त एकान्त स्थानी सामायिक करणे सामायिक व्रत आहे.

२. **प्रोषधोपवासव्रत** :– विषय, कषाय आणि आहार यांचा त्याग करून आत्मस्वभावासमीप राहणे उपवास होय. प्रत्येक अष्टमी व चतुर्दशीला सर्व आरंभ सोडून उपवास करणे प्रोषधोपवास आहे.

हा तीन प्रकारांनी केला जातो. – उत्तम, मध्यम, जघन्य.

उत्तम :– पर्वाच्या पहिल्यादिवशी व दुसऱ्या दिवशी एकाशन व पर्वाच्या दिवशी पूर्ण उपवास करणे उत्तम प्रोषधोपवास आहे.

मध्यम– फक्त पर्वाच्या दिवशी उपवास करणे, मध्यम प्रोषधोपवास होय.

जघन्य– पर्वाच्या दिवशी फक्त एकाशन करणे जघन्य प्रोषधोपवास आहे.

३. भोगोपभोग परिमाणव्रत– प्रयोजनभूत सीमित परिग्रहा-मधून-सुद्धा कषाय कमी करून भोग आणि उपभोग यांचे प्रमाण कमी करणे भोगोपभोग परिमाण व्रत आहे. पंचेंद्रिय विषयांपैकी जे एकवेळ भोगले जाऊ शकते त्यास भोग व वारंवार भोगले जाऊ शकते त्यास उपभोग म्हणतात.

४. अतिथीसंविभागव्रत– मुनी, व्रती श्रावक आणि अव्रती श्रावक या तीन प्रकारच्या पात्रांना आपल्या भोजनातून विभाग करून विधी-पूर्वक दान देणे अतिथीसंविभाग व्रत आहे.

निश्चयसम्यग्दर्शनपूर्वक या बारा व्रतांना निरतिचार धारण करणाऱ्या श्रावकालाच व्रती श्रावक म्हणतात. कारण सम्यग्दर्शन व सम्यक्-ज्ञानाशिवाय खरी व्रते होतच नाहीत निश्चय सम्यग्दर्शन व सम्यक्-ज्ञानपूर्वक अनंतानुबंधी व अप्रत्याख्यानावरण कषायांचा अभाव झाल्या-मुळे प्रगट होणाऱ्या आत्मशुद्धीच्या बरोबर सहजच ज्ञानी श्रावकांना वरील व्रतादी करण्याचे शुभ भाव होतात. आत्मज्ञानाशिवाय जे व्रता-दिरूप शुभ भाव होतात, ती खरी व्रते नाहीत.

ज्ञानी श्रावकाची बारा व्रते

अणुव्रत	गुणव्रत	शिक्षाव्रत
१. अहिंसाणुव्रत	१. दिग्व्रत	१. सामायिकव्रत
२. सत्याणुव्रत	२. देशव्रत	२. प्रोषधोपवासव्रत
३. अचौर्याणुव्रत	३. अनर्थदण्डव्रत	३. भोगोपभोग परिमाण व्रत
४. ब्रह्मचर्याणुव्रत		४. अतिथीसंविभागव्रत
५, परिग्रहपरिमाणव्रत		

५ + ३ + ४ = १२

प्रश्नः-

१. व्रती श्रावक कोणाला म्हणतात ? श्रावकांची व्रते म्हणजे काय ? ती किती प्रकारची आहेत ? नावासहित लिहा.

२. अहिंसाणुव्रत आणि सत्याणुव्रत यांचे विस्तारपूर्वक विवेचन करा.

३. निम्नांकितांपैकी कोणत्याही तीनची व्याख्या द्या. दिग्व्रत, अनर्थदण्डव्रत, सामायिक शिक्षाव्रत आणि भोगोपभोग परिमाणव्रत.

४. "ज्ञानी श्रावकाची बारा व्रते" या विषयावर आपल्या भाषेत एक निबंध लिहा.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

पाठ ७

मुक्तीचा मार्ग

आचार्य अमृतचंद्र

(व्यक्तित्व आणि कर्तृत्व)

आध्यात्मिक संतांमध्ये कुंदकुंदाचार्यांच्या नंतर जर कोणाचे नाव घेतले जाऊ शकते तर ते आहेत आचार्य अमृतचंद्र. दुःखाची गोष्ट आहे की, १२ व्या शताब्दीच्या जवळपास होऊन गेलेल्या या महान् आचार्यां-संबंधी त्यांच्या ग्रंथाशिवाय आम्हाला काहीच माहिती नाही.

लोक प्रशंसेपासून दूर राहणारे आचार्य अमृतचंद्र तर अपूर्व ग्रंथाची रचना केल्यानंतरसुद्धा लिहितात–

वर्णैः कृतानि चित्रैः पदानि,
तु पदैः कृतानि वाक्यानि ।
वाक्यैः कृतं पवित्रं शास्त्र–
मिदं न पुनरस्माभिः ॥ २२६ ॥

– पुरुषार्थसिध्दयुपाय

निरनिराळ्या वर्णांनी पदे बनली, पदांनी वाक्ये बनली, आणि वाक्यांनी हे पवित्र शास्त्र बनले. मी काही सुद्धा केले नाही.

याच प्रकारचा भाव त्यांनी तत्त्वार्थसार मध्ये सुद्धा प्रगट केलेला आहे.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

पं. आशाधरजींनी यांना "ठक्कुर" या शब्दाने अभिहित केले आहे, म्हणून हे एखाद्या राजघराण्याशी संबधित असतील असे वाटते.

यांचा संस्कृत भाषेवर अपूर्व अधिकार होता आपल्या गद्य आणि पद्य दोन्ही रचनांमध्ये यांची भाषा भावानुवर्त्तिनी आणि सहज बोध-गम्य, माधुर्य गुणाने युक्त आहे. हे आत्मरसात निमग्न राहणारे आत्मा होते, म्हणून यांच्या रचना अध्यात्म रसाने ओतप्रोत आहेत.

यांचे सर्व ग्रंथ संस्कृत भाषेमध्ये आहेत. यांच्या रचना गद्य आणि पद्य दोन्ही स्वरूपात आहेत. गद्य रचनांमध्ये आचार्य कुंदकुंदांच्या महान् ग्रंथावर लिहिलेल्या टीका आहेत.

१. समयसार टीका– ही "आत्मख्याती" या नावाने ओळ-खली जाते.

२. प्रवचनसार टीका– हिला "तात्पर्य दीपिका" असे म्हणतात

३. पंचास्तिकाय टीका– हीचे नाव "समय व्याख्या" आहे.

४. तत्त्वार्थसार– हा ग्रंथ गृद्धपिच्छ उमास्वामींच्या गद्यसूत्रांचा एका दृष्टीने पद्यानुवाद आहे.

५. पुरुषार्थसिद्ध्युपाय– गृहस्थ धर्मावर यांचा मौलिक ग्रंथ आहे. यात हिंसा आणि अहिंसा यांचे तथ्यपूर्ण विवेचन केले आहे.

प्रस्तुत अंश यांच्या पुरुषार्थसिद्ध्युपाय ह्या ग्रंथावर आधार-लेला आहे.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मुक्तीचा मार्ग

प्रवचनकार :- संसारात सर्व प्राणी दुःखी आहेत, आणि सगळे दुःखापासून मुक्तीची इच्छा करतात, त्यासाठी प्रयत्नदेखील करतात. हे सर्व मान्य आणि सर्व परिचित तथ्य आहे. पण मुक्तीचा खरा मार्ग माहित नसल्यामुळे त्यांचा प्रयत्न फुकट जातो. म्हणून मूलभूत प्रश्न हा आहे की, मुक्तीचा वास्तविक मार्ग काय आहे ?

मुक्तीचा मार्ग काय आहे ? या प्रश्नापूर्वी वास्तविक मुक्ती काय आहे. या समस्येचे समाधान अपेक्षित आहे. मुक्तीचा आशय दुःखापासून पूर्णतः मुक्ती असा आहे. दुःख आकुलतारूप आहे, म्हणून मुक्ती पूर्ण निराकुल असावयास हवी. जेथे अंशमात्रसुद्धा आकुलता आहे ते परिपूर्ण सुख नाही अर्थात् मुक्ती नाही.

मुक्तीचा मार्ग म्हणजे काय ? याचे निरुपण करीत असताना आचार्य अमृतचंद्र लिहितात.

एवं सम्यग्दर्शन बोध चारित्रत्रयात्मको नित्यम् ।
तस्यापि मोक्षमार्गो भवति निषेव्यो यथाशक्ति ॥२०॥

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान आणि सम्यक्चारित्र या तिहींची एकताच मोक्षमार्ग आहे. प्रत्येक जीवाला याचे सेवन अवश्य केले पाहिजे.

म्हणून हे तर निश्चित झाले की, सम्यग्दर्शन अर्थात् खरी श्रद्धा, सम्यग्ज्ञान अर्थात् खरे ज्ञान, आणि सम्यक्चारित्र अर्थात् खरे चारित्र ह्या तिन्हींची एकता हाच खरा मुक्तीचा मार्ग आहे. पण प्रश्न उपस्थित होतो की, सम्यक्दर्शन, सम्यग्ज्ञान आणि सम्यक्चारित्र काय आहे ?

निश्चयाने तर तिन्ही आत्मरूपच आहेत. अर्थात् आत्म्याच्या शुद्ध पर्यायी आहेत, परपदार्थांपासून भिन्न

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अशा आपल्या आत्म्याच्या वास्तविक स्वरूपाकडे उन्मुख होऊन स्वरूप जाणून त्यामध्ये आत्मपणाची श्रद्धा करणे, सम्यग्दर्शन होय. परपदार्थांपासून भिन्न अशा आपल्या आत्म्याला आणि परपदार्थाला स्वसन्मुख होवून यथार्थ जाणणे सम्यग्ज्ञान होय. आणि परपदार्थ आणि परभाव यांच्यापासून भिन्न असणाऱ्या आपल्या ज्ञानस्वभावी आत्म-स्वरूपात लीन होणे सम्यक्‌चारित्र होय.

यांचा विशेष खुलासा करताना आचार्य अमृतचंद्र लिहितात.

जीवाजीवादीनां तत्त्वार्थानां सदैव कर्तव्यम् ।
श्रद्धानं विपरीताऽभिनिवेश विविक्तमात्मरूपं तत् ।।२२।।

विपरीत मान्यतेने रहित जीवादिक तत्त्वार्थांचे श्रद्धान (प्रतीती) करणे हेच सम्यग्दर्शन आहे, याला प्राप्त करण्याचा नेहमी प्रयत्न केला पाहिजे. कारण ते आत्मरूपच आहे.

आम्ही सर्व प्रथम सम्यग्दर्शन प्राप्त करण्याचा प्रयत्न केला पाहिजे. कारण की, या प्राप्ती शिवाय मोक्षमार्गाची सुरुवातच होत नाही. म्हटलेच आहे :–

तत्रादौ सम्यक्त्वं समुपाश्रयणीयमखिल यत्नेन ।
तस्मिन् सत्येव यतो भवति ज्ञानं चारित्रं च ।।२१।।

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान आणि सम्यक्‌चारित्र या तीनमध्ये सर्व प्रथम सम्यग्दर्शनाला पूर्ण प्रयत्न करून प्राप्त करावयास पाहिजे, कारण सम्यक्त्व झाल्यानंतरच, ज्ञान सम्यग्ज्ञानरूप व चारित्र सम्यक्‌चारित्ररूप परिणत होते.

सम्यग्दर्शनाशिवाय समस्त ज्ञान अज्ञान आहे आणि समस्त महाव्रतादी रूप शुभाचरण मिथ्याचारित्र आहे.

मुमुक्षु – हे सम्यग्दर्शन कसे प्राप्त होते ?

प्रवचनकार– सर्वप्रथम तत्त्वाभ्यासाने सात तत्त्वांचे यथार्थ स्वरूप समज-ण्याचा व परपदार्थ व परभावांमध्ये परबुद्धी करण्याचा आणि त्यांच्यापासून भिन्न असलेल्या आपल्या आत्म्यात आत्मबुद्धीपूर्वक त्रिकाली आत्म्याच्या सन्मुख होऊन

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आत्मनुभूती प्राप्त करण्याचा उद्यम करणे हाच सम्यग्दर्शन प्राप्त करण्याचा उपाय आहे.

प्रश्नकार – आणि सम्यग्ज्ञान....?

प्रवचनकार– कर्तव्योऽध्यवसाय: सदनेकान्तात्मकेषु तत्त्वेषु ।
संशय विपर्ययानध्यवसाय विविक्तमात्मरूपम् तत् ।।३५।।

संशय, विपर्यय आणि अनध्यवसाय यांनी रहित आणि अनेकान्तात्मक प्रयोजनभूत तत्त्वांच्या खऱ्या ज्ञानालाच सम्यग्दर्शन म्हणतात. या सम्यग्ज्ञानाच्या प्राप्तीचा सुद्धा नेहमी प्रयत्न करावयास हवा.

जिज्ञासू – संशय, विपर्यय, अनध्यवसाय कशाला म्हणतात?

प्रवचनकार– संशय–परस्परविरुद्ध अनेक बाजूंना स्पर्श करणाऱ्या ज्ञानाला संशय म्हणतात. जसे–शुभराग पुण्य आहे की, धर्म आहे किंवा हे शिंपले आहे की, चांदी आहे इत्यादी. विपर्यय–विपरीत निश्चय करणाऱ्या ज्ञानास विपर्यय म्हणतात. जसे शुभरागास धर्म मानणे, शिंपल्यास चांदी म्हणणे, अनध्यवसाय–"हे काय आहे" किंवा "काही तरी आहे" केवळ एवढेच अरुचीपूर्वक आणि अनिर्णयपूर्वक जाणणे याला–अनध्यवसाय म्हणतात. जसे आत्मा काही तरी असेल, रस्त्यात चालत असताना कसल्यातरी मुलायम पदार्थाच्या स्पर्शाने असे जाणणे की काहीतरी आहे.

जिज्ञासू – आता सम्यक्चारित्राबद्दल देखील सांगा.

प्रवचनकार– चारित्रं भवति यत: समस्त सावद्य योगपरिहरणात् ।
सकल कषाय विमुक्तं विशदमुदासीनमात्मरूपं तत् ।।३९।।

समस्त सावध योगांनी रहित शुभाशुभ भावरूप कषाय भावांपासून मुक्त, जगापासून उदासीनरूप निर्मल आत्मलीनता हेच सम्यक्चारित्र आहे.

सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान आणि सम्यक्चारित्र यांनाच रत्नत्रय देखील म्हणतात. आणि हाच मुक्तीचा मार्ग आहे.

शंकाकार – तर काय रत्नत्रयाला धारण केल्याने मुक्तीचीच प्राप्ती होते, स्वर्गादिकांची नाही?

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

प्रवचनकार– स्वर्गादिक तर संसार आहे, जो मुक्तीचा मार्ग आहे तोच संसाराचा मार्ग कसा होऊ शकेल ? स्वर्गादिकांची प्राप्ती तर मुक्तीमार्गाच्या पथिकाला होणाऱ्या हेयरूप शुभभावांनी देवायु आदी पुण्याचा बंध झाल्यानंतर सहजच होते. रत्नत्रय तर मुक्तीचा मार्ग आहे, बंधनाचा मार्ग नाही.

शंकाकार – तर रत्नत्रयाला धारण करणारे मुनिराज स्वर्गादिकास का जातात ?

प्रवचनकार– रत्नत्रय तर मुक्तीचेच कारण आहे. पण रत्नत्रयधारी मुनिवरांना जो रागांश आहे, तोच बंधाचे कारण आहे. शुभ भावरूप अपराधाच्या फलामुळेच मुनिवर स्वर्गात जातात.

शंकाकार – शुभोपयोगाला अपराध म्हणता ?

प्रवचनकार– नीट ऐका तर ! मी थोडेच म्हणतो ?आचार्य अमृतचंद्रांनी स्वतः लिहिले आहे. –

ननु कथमेवं सिध्दयति देवायु प्रभृति सत्प्रकृतिबंधः
सकल जनसुप्रसिद्धो रत्नत्रयधारिणां मुनिवराणाम् ॥२१६॥

जर रत्नत्रय बंधाचे कारण नाही तर मग शंका उपस्थित होते की, रत्नत्रयधारी मुनिवरांना देवायु आदी सत्प्रकृतीचा बंध कसा होतो ?

या प्रश्नाच्या उत्तरादाखल स्वतः अमृतचंद्राचार्य लिहितात.

रत्नत्रयमिह हेतुर्निर्वाणस्यैव भवति नान्यस्य ।
आस्रवति यत्तु पुण्यं शुभपयोगोऽयमपराधः ॥२२०॥

रत्नत्रय धर्म निर्वाणाचेच कारण आहे, अन्य स्वर्गादिकाचे नाही. मुनिवरांना जो स्वर्गादिकांचे कारण असणारा पुण्याचा आस्रव होतो, त्यात शुभोपयोगाचाच अपराध आहे.

शंकाकार – त्या मुनिराजांना रत्नत्रय तर होतो, मग त्यांना बंध कसा झाला ?

प्रवचनकार– जेवढ्या अंशाने रत्नत्रय आहे तेवढ्या अंशाने अबंध आहे जेवढ्या अंशाने रागादिक आहेत, तेवढ्या अंशाने बंध आहे.

म्हटलेच आहे–

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

येनांशेन सुदृष्टिस्तेनांशेनास्य बंधनं नास्ति ।
येनांशेन तु रागस्तेनांशेनास्य बंधन भवति ॥२१२॥

येनांशेन ज्ञानं तेनांशेनास्य बंधनं नास्ति ।
येनांशेन तु रागस्तेनांशेनास्य बंधनं भवति ॥२१३॥

येनांशेन चरित्रं तेनाशेनास्य बंधनं नास्ति ।
येनांशेन तु रागस्तेनांशेनास्य बंधनं भवति ॥२१४॥

सम्यग्दर्शनामुळे आत्म्याची जेवढ्या अंशाने शुद्धी झाली आहे तेवढ्या अंशाने (पर्यायीने) बंध नाही, आणि ज्या अंशाने राग आहे, त्या अंशाने बंध आहे. ज्या अंशाने (आत्म्याचे) ज्ञान आहे त्या अंशाने बंध नाही आणि ज्या अंशाने राग आहे त्या अंशाने बंध होतो, ज्या अंशाने याचे चारित्र आहे त्या अंशाने बंध नाही आणि ज्या अंशाने राग आहे, त्या अंशाने बंध होतो.

जर आम्हाला बंधाचा अभाव करावयाचा असेल तर अर्थात् दुःख दूर करावयाचे असेल तर रत्नत्रयरूप परिणमन केले पाहिजे. हाच एकमात्र सांसारिक दुःखापासून सुटण्यासाठी खरा मुक्तीचा मार्ग आहे.

प्रश्न :–

१. मुक्ती म्हणजे काय ? आणि मुक्तीचा मार्ग (मोक्ष मार्ग) कशाला म्हणतात ?
२. निश्चय सम्यग्दर्शन, निश्चय सम्यग्ज्ञान आणि निश्चय सम्यक्चारित्र यांच्या व्याख्या लिहा.
३. सम्यग्दर्शन प्राप्त करण्याचा उपाय कोणता ?
४. संशय, विपर्यय व अनध्यवसाय यांच्या व्याख्या द्या.
५. रत्नत्रय स्वर्गादिकांचे कारण का नाही ?
सतर्क उत्तर द्या.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पाठ ८ निश्चय आणि व्यवहार

आचार्यकल्प पं. टोडरमलजी

(व्यक्तित्व आणि कर्तृत्व)

आचार्यकल्प पं. टोडरमलजींचे वडील श्री. जोगीदासजी खंडेल-वाल दि. जैन गोदिका गोत्रज होते आणि आई होती रंभाबाई ते विवाहित होते. त्यांना दोन पुत्र होते–हरिश्चंद्र आणि गुमानीराम गुमानीराम महान् प्रतिभाशाली आणि त्यांच्याप्रमाणेच क्रांतीकारी होते. जरी त्यांचे जीवन जयपूरमध्येच गेले, परंतु त्यांना आपल्या निर्वाहासाठी काही काळ सिंघाडा येथे राहावे लागले. ते तेथे दिल्लीच्या एका साव-काराकडे काम करीत होते.

परंपरागत मान्यतेनुसार त्यांचे आयुष्य जरी २७ मानले जाते तरी त्यांची साहित्यसाधना, ज्ञान व नवीनतम प्राप्त उल्लेख व प्रमाण यांच्या आधारावर हे निश्चित झाले की ते ४७ वर्षापर्यंत जिवंत राहिले. त्यांची मृत्युतिथि वि सं. १७७६–७७ मध्ये असावी.

त्यांचे सामान्य शिक्षण जयपूरच्या एका आध्यात्मिक सैली (तेरा पंथ) मध्ये झाले. परंतु अगाध विद्वता केवळ आपले कठीण श्रम आणि प्रतिभा यांच्या बळावरच त्यांनी प्राप्त केली. तिची वाटणी पण मोठ्या मनाने केली. ते प्रतिभासंपन्न, मेधावी आणि अध्ययनशील होते. प्राकृत, संस्कृत आणि हिंदी या–व्यतिरिक्त त्यांना कन्नड भाषेचेसुद्धा ज्ञान होते. यांच्याविषयी संवत् १८२१ मध्ये ब्र राजमल इंद्रध्वज विधान महोत्सव पत्रिकेमध्ये लिहितात–

“ऐसे महंत बुद्धि के धारक पुरुष इस काल विषैं होना दुर्लभ है, तातें वासुं मिले सर्व संदेह दूर होय हैं”

ते स्वयं मोक्षमार्ग प्रकाशकांमध्ये आपल्या अध्ययनाविषयी लिहि-तात.– “टीका सहित समयसार, पंचास्तिकाय, प्रवचनसार, नियमसार, गोम्मटसार, लब्धिसार, त्रिलोकसार तत्त्वार्थ सूत्र इत्यादि शास्त्र, अरू क्षपणासार, पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, अष्टपाहूड, आत्मानुशासन आदि शास्त्र अरू–श्रावक मुनि के आचार के निरूपक अनेक शास्त्र, अरू सुष्ठु कथा सहित पुराणादि शास्त्र इत्यादि अनेक शास्त्र हैं, तिनि विषैं हमारे बुद्धि अनुसार अभ्यास वर्त्तै है।”

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

त्यांनी आपल्या जीवनात लहान मोठ्या बारा रचना लिहिल्या ज्यांचे परिणाम जवळ जवळ एक लाख श्लोक प्रमाण आहे, व पाच हजार पृष्ठांच्या जवळपास या रचनांमध्ये काही तर लोकप्रिय ग्रंथांच्या विशाल प्रामाणिक टीका आहेत आणि काही स्वतंत्र रचना. त्या गद्य आणि पद्य दोन्ही रूपात आहेत त्या कालक्रमानुसार निम्नलिखित आहेत.

(१) रहस्यपूर्ण चिठ्ठी वि. सं. १८११)
(२) गोम्मटसार जीवकाण्ड भाषा टीका
(३) गोम्मटसार कर्मकांड भाषा टीका
(४) अर्थसंदृष्टी अधिकार
(५) लब्धिसार भाषा टीका
(६) क्षपणासार भाषा टीका
(७) गोम्मटसार पूजा
(८) त्रिलोकसार भाषा टीका
(९) समोशरण रचना वर्णन
(१०) मोक्षमार्ग प्रकाशक (अपूर्ण)
(११) आत्मानुशासन भाषा टीका
(१२) पुरुषार्थ सिद्ध्युपाय भाषा टीका (अपूर्ण)

[(२)–(६):] ◆ सम्यग्ज्ञान चंद्रिका (वि. सं. १८१८)

या टीकेस पं. दौलतराम कासलीवाल यांनी वि. सं. २८२७ मध्ये पूर्ण केले.

त्यांची गद्यशैली परिमार्जित, प्रौढ आणि सहज बोधगम्य आहे. त्यांच्या शैलीचे अतिशय सुंदर रूप त्यांचा मौलिक ग्रंथ ‘ मोक्षमार्ग प्रकाशक ’मध्ये पाहण्यास मिळते. त्यांची मूळरूपाने भाषा ब्रज असतांनासुद्धा तिच्यामध्ये ‘ खडी बोली ’चा खडेपणासुद्धा आहे आणि त्याबरोबरच स्थानीय रंगतसुद्धा आहे. त्यांची भाषा त्यांच्या भावांचे वहन करण्यास पूर्ण समर्थ व परिमार्जित आहे.

यांच्याबद्दल अधिक माहितीसाठी “ पंडित टोडरमल व्यक्तित्व और कर्तृत्व ” नावाचा ग्रंथ बघावयास पाहिजे. प्रस्तुत अंश मोक्षमार्ग प्रकाशकच्या सातव्या अधिकाराच्या आधारावर लिहिला गेला आहे. निश्चय–व्यवहार यांचा विशेष माहितीसाठी मोक्षमार्ग–प्रकाशकाच्या सातव्या अधिकाराचे अध्ययन अवश्य केले पाहिजे.

◆ गोम्मटसार जीवकाण्ड व कर्मकाण्ड भाषा, टीका, लब्धिसार व क्षपणासार भाषा, टीका आणि अर्थसंदृष्टी अधिकार यांना “ सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका ” असे सुद्धा म्हणतात.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

निश्चय आणि व्यवहार

गुमानीराम – पिताजी ! काल आपण म्हटले होते की, रत्नत्रय हाच दु:खापासून मुक्त होण्याचा मार्ग (मोक्षमार्ग) आहे. मोक्षमार्ग दोन आहेत ना ? निश्चय मोक्षमार्ग आणि व्यवहार मोक्षमार्ग.

पं. टोडरमलजी– नाही ! मोक्षमार्ग दोन नाहीत, मोक्षमार्गाचे कथन (वर्णन) दोन प्रकाराने केले आहे. जेथे खऱ्या मोक्ष-मार्गाला मोक्षमार्ग म्हटले जाते तो निश्चय मोक्षमार्ग आहे आणि जो मोक्षमार्ग तर नाही, परंतु मोक्षमार्गास निमित्त व सहचर आहे, त्यास उपचाराने मोक्षमार्ग म्हटले जाते, तो व्यवहार मोक्षमार्ग आहे. कारण निश्चय आणि व्यवहार यांचे सगळीकडे हेच लक्षण आहे ! –

"खऱ्या निरूपणाला निश्चय म्हणतात आणि उपचरित निरूपणाला व्यवहार."

समयसारामध्ये म्हटले आहे की–व्यवहार अभू-तार्थ (असत्यार्थ) आहे, कारण तो सत्य स्वरूपाचे निरुपण करीत नाही. निश्चय भूतार्थ (सत्यार्थ) आहे. कारण तो वस्तु स्वरूपाचे खरे निरूपण करतो.

गुमानीराम – मी तर असे समजतो की सिद्धासमान शुद्ध आत्म्याचा अनुभव करणे निश्चय आहे आणि व्रत, शील, सयंमादीची प्रवृत्ती व्यवहार आहे.

पं. टोडरमलजी– हे बरोबर नाही, कारण कोणत्यातरी द्रव्य–परि-णामाचे नाव निश्चय आणि काणत्यातरी द्रव्य–परि-णामाचे नाव व्यवहार" असे नाही, परंतु "एकाच

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

द्रव्याच्या परिणामाचे त्याच स्वरूपामध्ये वर्णन करणे निश्चय नय आहे आणि उपचाराने त्या द्रव्याच्या परिणामाचे दुसऱ्या द्रव्याच्या परिणाम स्वरूप वर्णन करणे व्यवहार आहे." जसे–मातीच्या घागरीला मातीची म्हणणे निश्चय आणि तुपाचा संयोग पाहून उपचाराने तिला तुपाची म्हणणे व्यवहार आहे.

गुमानीराम – समयसारामध्ये तर शुद्धात्म्याच्या अनुभवाला निश्चय आणि व्रत, शील, सयंमादींना व्यवहार म्हटले आहे.

पं. टोडरमलजी– शुद्धात्म्याचा अनुभव खरा मोक्षमार्ग आहे, म्हणून त्याला निश्चय मोक्षमार्ग म्हटले आहे पण व्रत, तप इ. मोक्षमार्ग नाही, यांना निमित्ताच्या अपेक्षेने उपचाराने मोक्षमार्ग म्हंटले आहे म्हणून यांना व्यवहार मोक्षमार्ग म्हणतात.

म्हणून निश्चयनयाने जे निरूपण केले असेल त्यास खरे (सत्यार्थ) मानून त्याचे श्रद्धान करावे आणि व्यवहार नयाने जे निरूपण केले असेल त्यास असत्य (असत्यार्थ) मानून त्याचे श्रद्धान सोडावे.

गुमानीराम – श्रद्धान निश्चयाचे ठेवावे आणि प्रवृत्ती व्यवहार रूप ठेवावी असेच करावे ना ?

पं. टोडरमलजी– नाही. निश्चयाचे निश्चयरूप आणि व्यवहाराचे व्यवहार रूप श्रद्धान केले पाहिजे. आणि प्रवृत्तीमध्ये तर नयाचे प्रयोजन नाहीच. प्रवृत्ती तर द्रव्याची परिणती आहे. ज्या द्रव्याची परिणती असेल तिला त्याचीच (त्या द्रव्याचीच) म्हणणारा निश्चय नय आहे, आणि तिलाच अन्य द्रव्याची म्हणणारा व्यवहार नय आहे. म्हणून असे श्रद्धान करावे की, निश्चय नयाचे कथन सत्यार्थ आहे आणि व्यवहार नयाचे कथन उपचरित असल्यामुळे असत्यार्थ आहे

गुमानीराम – आपण असे का म्हटले की, निश्चय नयाचे श्रद्धान करावे आणि व्यवहार नयाचे श्रद्धान सोडावे.

पं. टोडरमलजी– ऐका ! व्यवहारनय स्वद्रव्य परद्रव्यांना व त्यांच्या भावांना आणि कारण कार्यादिकांना एकमेकात मिसळून

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

निरूपण करतो, या प्रकारच्या श्रद्धानामुळे मिथ्यात्व होते, म्हणून व्यवहार नय त्याग करण्यायोग्य आहे. आणि निश्चय नय त्यांचेच यथावत् निरूपण करतो कोणालाही कोणामध्ये मिसळत नाही, अशा श्रद्धानामुळे सम्यक्त्व होते, म्हणून त्याचे श्रद्धान करावे.

गुमानीराम – तर मग जैन शास्त्रामध्ये दोन्ही नयाचे ग्रहण करावे असे का सांगितले आहे ?

पं. टोडरमलजी– जेथे निश्चय नयाचे कथन असेल त्यास "सत्यार्थ असाच आहे" असे मानावे, जेथे व्यवहार नयाच्या मुख्यतेने कथन असेल, त्यास 'असे नाही, निमित्तादिकांच्या अपेक्षेने उपचाराने कथन केले आहे, असे मानणे म्हणजेच दोन्ही नयांचे ग्रहण आहे.'

गुमानीराम – जर व्यवहारास हेय म्हणाल तर लोक व्रत, शील, संयम इत्यादींना सोडून देतील.

पं. टोडरमलजी– व्रत, शील, संयमादिकांना व्यवहार म्हटले नाही, यांना मोक्षमार्ग मानणे हा व्यवहार आहे. यांना खरा मोक्षमार्ग मानणे तर सोडायलाच पाहिजे. जर व्रतादिकांना सोडाल तर काय हिंसादीरूप प्रवृत्ती कराल ? तर मग पुन्हा अधिकच वाईट होईल. म्हणून व्रतादिकांना सोडणे पण ठीक नाही आणि त्यांना खरा मोक्षमार्ग मानणेसुद्धा बरोबर नाही.

गुमानीराम – जर असे आहे तर जिनवाणीमध्ये व्यवहाराचे कथनच का केले आहे ?

पं. टोडरमलजी– ज्याप्रमाणे म्लेच्छांना म्लेच्छ भाषेशिवाय समजावून सांगता येत नाही, त्याचप्रमाणे व्यवहाराशिवाय परमार्थाचा उपदेश दिला जाऊ शकत नाही. म्हणून जिनवाणीमध्ये व्यवहाराचे कथन आले आहे. ज्याप्रमाणे म्लेच्छांना समजाविण्यासाठी जरी म्लेच्छ भाषेचा आश्रय घ्यावा लागला तरी म्लेच्छ होणे बरोबर होणार नाही, त्याचप्रमाणे परमार्थाचे प्रतिपादक असल्यामुळे जरी व्यवहाराचे कथन असले तरी तो (व्यवहार) अनुसरण करण्यायोग्य नाही.

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

गुमानीराम – व्यवहार निश्चयाचा प्रतिपादक कसा आहे ?

पं. टोडरमलजी– जसे हिमालयातून उगम पावून बंगालच्या खाडीला मिळणाऱ्या शेकडो मैल लांब गंगानदीची लांबीच काय पण रुंदी देखील आपण पाहू शकत नाही, म्हणून तिची लांबी, रुंदी व प्रवाहाच्या वळणांना जाणण्यासाठी आपणास नकाशाचा अवलंब करावा लागतो. परंतु जी गंगा नकाशात आहे ती वास्तविक नाही, तिच्यामुळे केवळ गंगेला समजावले जाऊ शकते, तिच्याद्वारे कोणताही प्रवासी आपली तहान शमवू शकत नाही. तहान शमविण्यासाठी खऱ्या गंगेच्या किनारीच जावे लागेल. त्याप्रमाणे व्यवहाराद्वारे सांगितलेले वचन नकाशातील गंगेप्रमाणेच आहे. त्याच्यामुळे समजले जाऊ शकते, परंतु त्याच्या आश्रयाने आत्मानुभूती प्राप्त केली जाऊ शकत नाही. आत्मानुभूती प्राप्त करण्यासाठी तर निश्चय नयाच्या विषयभूत शुद्धात्म्याचाच आश्रय घेणे आवश्यक आहे. म्हणून व्यवहार नय केवळ जाणण्यासाठी (समजण्यासाठी) प्रयोजनवान आहे.

प्रश्न–

१. मुक्तीचा मार्ग (मोक्षमार्ग) काय आहे ? काय तो दोन प्रकारचा आहे ? स्पष्ट करा.
२. निश्चय मोक्षमार्ग आणि व्यवहार मोक्षमार्ग यांच्यात काय अंतर आहे ? स्पष्ट करा.
३. निश्चय आणि व्यवहार यांच्या व्याख्या द्या.
४. खालील व्याख्येतील दोष स्पष्ट करा. "सिद्धसमान शुद्धात्म्याचा अनुभव करणे निश्चय आणि व्रत, शील, संयमादी प्रवृत्ती व्यवहार आहे."
५. जिनवाणीमध्ये व्यवहाराचा उपदेश का दिला आहे ?
६. दोन्ही नयांचे ग्रहण करावे याचा अभिप्राय काय आहे ?

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पाठ ९

दशलक्षण महापर्व

जिनेश – बोला ! विनोद मंदिरात येता काय ?

विनोद – नाही ! आज तर सिनेमाला जाण्याचा विचार आहे.

जिनेश – का ?

विनोद – कारण आज मन शांत नाही. काही तरी विरंगुळा होईल.

जिनेश – वारे वा ! सिनेमामध्ये शांती शोधण्यासाठी निघालात ? सिनेमा तर राग–द्वेष (अशांती) चाच वर्धक आहे. आणि आता तर दशलक्षण महापर्व सुरू झाला आहे. हे दिवस तर धर्माच्या आराधनेचे आहेत. या दिवसात सर्व लोक आत्मचिंतन, पूजन-पाठ, व्रत–उपवास इत्यादी करतात. आणि पूर्ण दिवस स्वाध्याय, तत्त्वचर्चा इत्यादीमध्ये घालवितात.

विनोद – हा दशलक्षण धर्म काय आहे ?

जिनेश – आत्मस्वभावाच्या प्रतीतिपूर्वक चारित्राची (धर्माची) दहा प्रकारांनी आराधना करणे हाच दशलक्षण धर्म आहे. आचार्य उमास्वामींनी तत्त्वार्थ सूत्रात लिहिले आहे–

" उत्तमक्षमामार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतपस्त्यागांकिचन्यब्रह्म-चर्याणि दशधर्मः ।।९।।६।."

अर्थात् उत्तम क्षमा, उत्तम मार्दव, उत्तम आर्जव, उत्तम शौच, उत्तम सत्य, उत्तम संयम, उत्तम तप, उत्तम त्याग, उत्तम आकिंचन्य आणि उत्तम ब्रम्हचर्य हे धर्माचे दहा प्रकार आहेत.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बिनोद – या दहा धर्मांना थोडे अधिक स्पष्ट करून समजावू शकाल काय ?

जिनेश – का नाही ? ऐका !

अनंतानुबंधी आदी तीन कषायांचा अभाव असताना ज्ञानी मुनिवरांना जी विशिष्ट चारित्राची शुद्ध परिणती होते, निश्चयाने तिला उत्तम क्षमा, मार्दव आदी दहा धर्म म्हणतात. आणि त्या भूमिकेमध्ये मुनिवरांना सहजतेने जे क्षमादी रूप शुभ भाव होतात, त्यांना व्यवहाराने उत्तम क्षमादी दश धर्म म्हणतात, आणि ही शुभ परिणती पुण्य रूप असते. धर्म हा निश्चय सम्यग्दर्शनपूर्वक असतो. याचा बोध व्हावा म्हणून उत्तम शब्दाचा प्रयोग केला आहे.

निश्चयाने तर त्रैकालिक क्षमास्वभावी आत्म्याच्या आश्रयाने अनंतानुबंधी आदी तीन प्रकारच्या क्रोधाची त्याग रूप शुद्धीच उत्तम क्षमा आहे. निश्चय क्षमा असताना निंदा आणि शरीरघात इत्यादी अनेक प्रतिकूल संयोग प्राप्त होऊनही क्रोधरूप अशुभ भाव न होता शुभ भावरूप क्षमा होणे व्यवहाराने उत्तम क्षमा आहे.

याचप्रमाणे निश्चयाने तर त्रैकालिक मार्दवस्वभावी आत्म्याच्या आश्रयाने अनंतानुबंधी आदी तीन प्रकारच्या मान कषायाची त्यागरूप शुद्धीच उत्तम मार्दव धर्म आहे आणि निश्चय मार्दव धर्माबरोबर होणारी जाति कूल इत्यादीच्या आश्रयाने उत्पन्न होणारे आठ मदरूप अशुभ भाव न होता निरभिमानरूप शुभ भाव होणे व्यवहाराने उत्तम मार्दव धर्म आहे.

बिनोद – आणि आर्जव ?

जिनेश – निश्चयाने त्रैकालिक आर्जवस्वभावी आत्म्याच्या आश्रयाने तीन प्रकारची माया कषायाची त्यागरूप शुद्धी होणे उत्तम आर्जव धर्म आहे. आणि निश्चय आर्जवाबरोबरच कपट रूप अशुभ भाव न होता शुभ भावरूप सरलता होणे, व्यवहाराने उत्तम आर्जव धर्म आहे.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

याचप्रमाणे त्रैकालिक शौचस्वभावी आत्म्याच्या आश्रयाने तीन प्रकारच्या लोभकषायाची त्यागरूप शुद्धी निश्चयाने उत्तम शौच धर्म आहे आणि निश्चय शौच धर्माबरोबर लोभरूप अशुभ भाव न होता शुभ भावरूप निर्लोभता असणे (लोभ नसणे) व्यवहाराने उत्तम शौच धर्म आहे.

विनोद – आणि सत्य बोलणे म्हणजे सत्य धर्मच ना ?

जिनेश – अरे बाबा ! वचन तर पुद्‌गलाचा पर्याय आहे. त्यात धर्म कसा ? त्रैकालिक ज्ञानस्वभावी आत्म्याच्या आश्रयाने जी तीन कषायांच्या अभावरूप शुद्ध परिणती होते, तीच निश्चयाने उत्तम सत्य धर्म आहे आणि निश्चय सत्य धर्माबरोबर होणारा सत्य वचन बोलण्याचा शुभ भाव व्यवहाराने उत्तम सत्य धर्म आहे.

याचप्रकारे त्रैकालिक संयमस्वभावी आत्म्याच्या आश्रयाने होणारी तीन कषायाच्या अभावरूप शुद्ध परिणती निश्चयाने उत्तम संयम धर्म आहे. आणि निश्चय संयमाबरोबर मुनींच्या भूमिकेनुसार होणारी हिंसादीपासून पूर्ण विरती आणि इंद्रियनिग्रह व्यवहाराने उत्तम संयम धर्म आहे.

विनोद – तुम्ही फार चांगले समजावून सांगितले, वेळ असेल तर थोडे विस्ताराने सांगा ना ?

जिनेश – आता वेळ कमी आहे, प्रवचनाची वेळ होत आहे. दररोज संध्याकाळी याच दहा धर्मावर प्रवचने होतात, म्हणून विस्ताराने तेथे ऐका. आता उरलेल्या तप त्याग इत्यादीसुद्धा संक्षेपामध्ये सांगावयाचे आहे. त्रैकालिक ज्ञानस्वभावी आत्म्याच्या आश्रयाने तीन कषायांची अभावरूप शुद्धी निश्चयाने उत्तम तप धर्म आहे आणि तिच्याबरोबर होणारा अनशनादी संबंधी शुभभाव व्यवहाराने उत्तम तप धर्म आहे.

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

त्रैकालिक ज्ञानस्वभावी आत्म्याच्या आश्रयाने तीन कषायांची अभावरूप शुद्धी निश्चयाने उत्तम त्याग धर्म आहे आणि तिच्याबरोबर होणारा योग्य पात्रांना दानादी देण्याचा शुभभाव व्यवहाराने उत्तम त्याग धर्म आहे.

याचप्रमाणे त्रैकालिक ज्ञानस्वभावी आत्म्याच्या आश्रयाने तीन कषायांची अभावरूप शुद्धी निश्चयाने उत्तम आकिंचन्य धर्म आहे आणि तिच्याबरोबर होणारा परिग्रह-त्यागरूप शुभभाव व्यवहाराने उत्तम आकिंचन्य धर्म आहे.

आनंदस्वभावी परम ब्रह्म त्रैकालिक आत्म्यामध्ये चर्या (रमणे) अर्थात् लीन होणेरूप शुद्धी निश्चयाने उत्तम ब्रह्म-चर्य धर्म आहे आणि त्याबरोबर होणारा स्त्री संगमादीचा त्यागारूप शुभभाव व्यवहाराने उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म आहे.

विनोद – निश्चय आणि व्यवहार धर्मामध्ये काय अंतर आहे ?

जिनेश – जो उत्तम क्षमादी शुद्ध भावरूप निश्चय धर्म आहे, तो संवर निर्जरारूप असल्यामुळे मुक्तीला कारण आहे आणि जो क्षमादीरूप शुभभाव व्यवहार धर्म आहे, तो पुण्यबंधाला कारण आहे.

विनोद – वरील निश्चय–व्यवहाररूप उत्तम क्षमादी दहा धर्म तर मुनिवरांसाठी आहेत, पण आमच्यासाठी ?

जिनेश – धर्म तर सगळ्यांसाठी एकच आहे ही गोष्ट वेगळी की, मुनिराज आपल्या उग्र (विशेष) पुरुषार्थाद्वारे अनंतानुबंधी आदी तीन कषायांची अभावरूप विशेष शुद्धी प्राप्त करतात आणि गृहस्थ आपल्या भूमिकेनुसार दोन किंवा एका कषायांची अभावरूप अल्प शुद्धी प्राप्त करतात.

प्रश्न–

१. दशलक्षण धर्म म्हणजे काय ? तो किती प्रकारचा आहे ? नावासहित सांगा.
२. निश्चय व व्यवहार धर्मात काय अन्तर आहे ? स्पष्ट करा.
३. निम्नलिखितांपैकी कोणत्याही तीन धर्मांना निश्चय आणि व्यवहार यांच्या संधीपूर्वक स्पष्ट करा.
४. उत्तम क्षमा, उत्तम सत्य, उत्तम तप, उत्तम आकिंचन आणि उत्तम ब्रह्मचर्य.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पाठ १०

बलभद्र राम

विद्यार्थी – गुरुजी, राम आणि हनुमान भगवान नाहीत काय ?

शिक्षक – ते भगवान नाहीत असे कोण म्हणे ? त्यांनी मांगीतुंगी सिद्धक्षेत्रावरून मुक्तिपद प्राप्त केले आणि ते सिद्ध भगवानांच्या रूपामध्ये शाश्वत विराजमान आहेत. आम्ही निर्वाण काण्डभाषामध्ये म्हणतो–

राम हणू सुग्रीव सुडील
गवगवाख्य नील महानील।
कोडि निन्याणव मुक्ती पयान,
तुंगीगिरि वंदो धरि ध्यान।

विद्यार्थी – तर काय सुग्रीवादी वानर आणि नल, नीलादी अस्वल पण मोक्षाला गेलेत ? ते देखील भगवान बनलेत ?

शिक्षक – हनुमान, सुग्रीव वानर नव्हते, आणि नल, नील अस्वल नव्हते. ते तर सर्वांगसुंदर महापुरुष होते, ज्यांनी आपल्या जीवनात आत्मसाधना करून वीतरागता आणि सर्वज्ञता प्राप्त केली होती.

विद्यार्थी – मग यांना वानरादी का म्हटले जाते ?

शिक्षक – त्यांच्या वंशाचे नाव वानरादी वंश होते. याचप्रमाणे रावण देखील राक्षस नव्हते ? ते राक्षसवंशीय त्रिखंडी राजे होते.

विद्यार्थी – लोक म्हणतात–त्यांना दहा तोंडे होती. काय ही गोष्ट खरी आहे ?

शिक्षक – दहा तोंडाचा कधी मनुष्य असतो काय ? त्याचे नाव दशमुख अवश्य होते. त्याचे कारण हे होते की, जेव्हा बालक असतांना त्यांना पाळण्यामध्ये झोपवले होते त्यांच्या गळयात नऊ मण्यांचा एक हार होता, त्याचे प्रतिबिंब

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

त्या नऊ मण्यांमध्ये पडले होते म्हणून दहा मुख दिसत होते, म्हणून लोक त्याला दशमुख म्हणू लागले.

विद्यार्थी – रामाचा जन्म कोठे झाला होता ?

अध्यापक – बालक रामाचा जन्म अयोध्येचा राजा दशरथाची राणी कौसल्येच्या पोटी झाला होता. तोच बालक राम पुढे आत्मसाधनेद्वारे भगवान राम बनला.

दशरथ राजाला चार राण्या होत्या, त्यापैकी कौसल्येपासून रामाचा, सुमित्रेपासून लक्ष्मणाचा, कैकईपासून भरताचा आणि सुप्रभेपासून शत्रुघ्नाचा जन्म झाला होता.

विद्यार्थी – म्हणजे हे चार भाऊ होते आणि ?

शिक्षक – रामाचे लग्न राजा जनकाची मुलगी सीता हिच्याशी झाले होते. एक दिवस दशरथाने विचार केला की, माझा मोठा मुलगा राम राज्य कारभार सांभाळण्यायोग्य झाला आहे, म्हणून राज्यकारभार त्याच्या हाती देऊन मी आत्मसाधनेत लीन व्हावे. म्हणून त्यांनी रामाच्या राज्याभिषेकाची घोषणा केली परंतु ? ......

विद्यार्थी – परन्तु काय ? .....

शिक्षक – कैकई राणीची इच्छा होती की, माझा पुत्र भरत राजा व्हावा. म्हणून तिने राजास दोन वरदान मागितले की, रामास चौदा वर्षाचा वनवास व्हावा व भरतास राज्य प्राप्त व्हावे. राजाला हे ऐकून फार दुःख झाले, परंतु ते वचनबद्ध होते त्यामुळे रामांना वनवासात जावे लागले. बरोबर सीता आणि भाऊ लक्ष्मणसुद्धा गेले.

विद्यार्थी – मग भरत राजा बनले असावेत ?

शिक्षक – बनले कसले ? त्यांना तर राज्य नकोच होते.

विद्यार्थी – वनवासात रामाला अनेक आपत्तींना तोंड द्यावे लागले असेल.

शिक्षक – लहान मोठ्या आपत्तींना राम–लक्ष्मणासारखे वीर पुरुष काय जुमानतात ? पण " सीता हरण "सारख्या घटनेने त्यांना एकेवेळी विचलित केले होते.

विद्यार्थी – सीतेचे हरण कोणी केले होते.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

शिक्षक – लंकेचा राजा रावणाने सीतेचे हरण केले होते. तो त्यावेळी अर्धचक्री राजा होता. हनुमान, सुग्रीव इत्यादी त्याचे अंतर्गत मंडलेश्वर राजे होते. परंतु त्याच्या या अधम कृत्याने त्यांचे मन त्याच्याविरुद्ध झाले. त्याचा लहान भाऊ बिभिषणानेसुद्धा त्याला पुष्कळ समजाविले पण त्याचे भवितव्यच खोटे होते. म्हणून त्याने कोणाचेच ऐकले नाही. शेवटी बिभिषणालासुद्धा त्याचा दरबार सोडावा लागला.

विद्यार्थी – नंतर काय झाले ?

शिक्षक – राम आणि लक्ष्मण यांनी लंकेवर चढाई केली. बिभिषण, सुग्रीव, नल, नील, हनुमान इत्यादी मंडलेश्वर राजांनी राम–लक्ष्मणाला साथ दिली आणि दुराचारी रावणाची जी दुर्गती होणार होती ती झाली, अर्थात रावण मारला गेला आणि राम–लक्ष्मण यांचा विजय झाला. सीता रामाला परत मिळाली. चौदा वर्षे संपली आणि राम-लक्ष्मण अयोध्येला परत येऊन राज्य करू लागले.

विद्यार्थी – चला बरे झाले ! संकट टळले. नंतर सीता आणि राम आनंदाने भोगोपभोग भोगत मजेत राहिले असतील.

शिक्षक – भोगामध्येसुद्धा आनंद असतो काय ? ते तर विपत्तीचे माहेर घर आहे. जोपर्यंत आत्म्यामध्ये मोह–राग–द्वेष आहेत तोपर्यंत संकटेच संकट आहेत. राम आणि सीता काही दिवससुद्धा शांतीने राहू शकले असतील नसतील की, एवढ्यावरच लोकापवादामुळे गर्भवती सीतेला रामाने निर्वासित करून टाकले. भयंकर अरण्य जर पुण्डरीक-पुरचा राजा वज्रजंघाने तिला धर्मबहीन मानून आश्रय दिला नसता तर....

विद्यार्थी – मग....

शिक्षक – पुण्डरीकपूरमध्ये सीतेने लव आणि कुश या दोन जुळ्या भावांना जन्म दिला. ते दोन्ही भाऊ रामलक्ष्मणासारखेच वीर, धीर आणि प्रतापी होते. त्यांचे राम आणि लक्ष्मणाशीसुद्धा युद्ध झाले होते.

विद्यार्थी – कोण जिंकले ?

शिक्षक – दोन्ही पक्ष अजिंक्य राहिले. जय–पराजयाचा अंतिम निर्णय होण्यापूर्वीच त्यांना कळले की, हे युद्ध पिता–पुत्रांचे आहे, म्हणून युद्धस्थळ स्नेहसंमेलनात रूपांतरीत झाले.

विद्यार्थी – चला आता तरी सीतेच्या दु:खाचा अंत झाला !

शिक्षक – रागाच्या अस्तित्वामध्ये दु:खाचा अंत होऊच शकत नाही. दु:खाच्या अन्ताचा उपाय एकमात्र वीतरागताच आहे.

विद्यार्थी – नंतर काय झाले ?

शिक्षक – रामाने अग्नी–परिक्षेशिवाय सीतेचा स्वीकार करावयास नकार दिला.

विद्यार्थी – नंतर....

शिक्षक – महासती सतीने अग्नी–प्रवेश करून आपली पवित्रता प्रगट केली. भयंकर अग्नीच्या ज्वालेचेदेखील शीतल शांत जलरूप परिणमन झाले. शील महात्म्यामुळे स्वर्गातील देवांकडून हा चमत्कार केला गेला.

विद्यार्थी – नंतर रामाने सीतेचा स्वीकार केला असेल ?

शिक्षक – होय, राम तर सीतेचा स्वीकार करण्यासाठी तयार झाले पण सीतेने गृहस्थपणाच्या रागद्वेषरूप अग्नीमध्ये जळणे स्वीकार केले नाही. कारण तिने भोगामध्ये सुख नाही हे चांगल्या रीतीने जाणले होते. सुख प्राप्तीचा उपाय फक्त वीतरागी मार्गच आहे या श्रद्धेने तिने आर्यिकेची व्रते धारण केली आणि ती आत्मसाधनेमध्ये रत झाली.

विद्यार्थी – आणि राम.... ?

शिक्षक – रामसुद्धा काही काळानंतर संसाराची असारता पाहून वीतरागी साधू झाले आणि आत्मसाधनेच्या चरम स्थिती-पर्यंत पोहचून रागद्वेषांचा नाश करून पूर्ण ज्ञानी (सर्वज्ञ) बनले.

प्रश्न :–

१. श्री. रामाची कथा आपल्या शब्दात लिहा.
२. हनुमान आदींना वानर व रावणादींना राक्षस का म्हणतात ?
३. भगवान कोणाला म्हणतात ? राम आणि हनुमान भगवान आहेत किंवा नाहीत ? जर आहेत, तर कारण द्या.

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पाठ ११ — समयसार स्तुति

(हरिगीत)

संसारी जीवनां भावमरणो टाळवा करुणा करी,
सरिता वहावी सुधा तणी प्रभु वीर ! ते सजीवनी ।
शोषाती देखी सरितने करुणाभीना हृदये करी,
मुनिकुन्द संजीवनी समयप्राभृत तणे भाजन भरी ।।

(अनुष्टुप्)

कुन्दकुन्द रच्युं शास्त्र, सांथिया अमृते पूर्या,
ग्रन्थाधिराज ! तारामां भावो ब्रम्हांडना भर्या :

(शिखरिणी)

अहो ! वाणी तारी प्रशमरस–भावे नीतरती,
मुमुक्षुने पाती अमृतरस अंजलि भरी भरी ।
अनादिनी मूर्छा विष तणी त्वराथी उतरती,
विभावेथी थभी स्वरुप भणी दोडे परिणति ।।

(शार्दूलविक्रीडित)

तूं छे निश्चयग्रन्थ, भंग सघळा व्यवहारना भेदवा,
तूं प्रज्ञाछीणी ज्ञानने उदयनी संधि सहु छेदवा ।
साथी साधकनो, तुं भानु जगनो. संदेश महावीरनो,
विसामो भवक्लांतना हृदयनो, तूं पंथ मुक्ति तणो ।।

(वसंततिलका)

सूण्ये तने रसनिबंध शिथिल थाय,
जाण्ये तने हृदय ज्ञानी तणा जणाय ।
तूं रूचतां जगतनी रुचि आळसे सौ,
तूं रीझतां सकलज्ञायकदेव रीझे ।।

(अनुष्टुप्)

बनावुं पत्र कुन्दननां, रत्नोंना अक्षरो लखी,
तथापि कुन्दसूत्रोनां अंकाये मूल्य ना कदी ।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

समयसार स्तुतीचा भावार्थ

हे महावीर ! आपण संसारी जीवांचे भाव–मरण (राग–द्वेषरूप परिणमन) टाळण्यासाठी करूणा करून खरे जीवन देणारी तत्त्व-ज्ञान समजावून सांगणारी अशी दिव्यध्वनीरूप अमृताची नदी वहाविली होती. त्या अमृतवाणीरूपी नदीला कोरडी होत असलेली पाहून करुणेने भावलिंगी सन्त मुनिराज कुन्दकुन्दाचार्यांनी समयसार नामक महाशास्त्र-रूपी पात्रात जीवन देणारे ते अमृतवाणी रूपी जल भरले.

परमपूज्य कुन्दकुन्दाचार्य देवांनी समयसार शास्त्र बनविले आणि आचार्य अमृतचंद्रांनी त्यावर आत्मख्याति टीका आणि कलश लिहून त्यावर मांगलिक अशी स्वस्तिक काढली. हे महान ग्रंथ समयसार ! तुझ्यात साऱ्या ब्रह्माण्डाचा भाव भरलेला आहे.

हे कुन्दकुन्दाचार्य देव ! समयसार नामक महाशास्त्रामध्ये प्रगट झालेली आपली वाणी शान्त रसाने भरपूर आहे. आणि मुमुक्षु प्राण्यांना ओंजळी भरभरून अमृत पाजते आहे. जशी विषपानामुळे उत्पन्न झालेली मूर्छा अमृत पानाने दूर होते, त्याचप्रमाणे अनादीकालीन मिथ्यात्व–विषोत्पन्न मूर्छा आपल्या अमृत–वाणीच्या पानामुळे लवकरच दूर होते. आणि विभाव भावामध्ये रमलेली परिणती स्वभावाकडे धावू लागते.

हे समयसार ! तू निश्चय नयाचा ग्रंथ आहेस, म्हणून व्यवहा-राच्या समस्त भंगांना भेदणारा आहेस आणि तूच ज्ञानभाव आणि कर्मोदयजन्य औपाधिक भावांच्या संधीला भेदणारी प्रज्ञारूपी छिन्नी आहेस. मुक्तीमार्गाच्या साधकांचा तू खरा साथी आहेस, जगाचा सूर्य आहेस, आणि तूच खरा महावीरांचा संदेश आहेस. संसार दुःखामुळे दुःखी असणाऱ्या हृदयांना विश्राम देणारा ग्रंथराज! तू मुक्तीचा मार्गच आहेस.

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

हे समयसार! तुला ऐकण्यामुळे कर्म रस (अनुभाग बंध) शिथील पडतो, तुला जाणून घेतल्याने ज्ञानींचे हृदय जाणले जाऊ शकते. तुझ्याविषयी रूची उत्पन्न होताच सांसारिक विषय भोगांची रूची समाप्त होते, ज्याच्यावर तू खुष होतो त्याच्यावर संपूर्ण ज्ञेयांना जाणण्याचा स्वभाव असलेला त्याचा आत्मा खुष होतो. तात्पर्य हे आहे की, सकल ज्ञेयांचा ज्ञायक असा आत्मा अनुभूतीमध्ये प्रगट होतो.

तप्त सुवर्ण पत्र बनवून त्यावर रत्न अक्षरांनी कुन्दकुन्दांच्या सूत्रांना लिहिले तरी सुद्धा कुन्दकुन्दांच्या सूत्राचे मूल्य केले जाऊ शकत नाही.

प्रश्न :-

१. समयसार स्तुतीचा सारांश आपल्या शब्दात लिहा.

२. उपरोक्त स्तुतीमध्ये जो छंद तुम्हास सर्वात अधिक आवडला असेल त्यास अर्थासहित लिहा.

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

हमारे यहाँ प्राप्त महत्वपूर्ण प्रकाशन

सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका (जीव काण्ड)	४०–००
बृहज्जिनवाणी संग्रह	२५–००
समयसार/मोक्षशास्त्र	२०–००
प्रवचनसार/अष्टपाहुड	१६–००
नियमसार/समयसार नाटक	१५–००
सिद्धचक्र विधान	१३–००
प्रवचन रत्नाकर भाग १/आध्यात्मिक पाठ संग्रह	१२–००
ज्ञानस्वभाव ज्ञेयस्वभाव/मोक्षमार्ग प्रकाशक	१२–००
पण्डित टोडरमल : व्यक्तित्व और कर्तृत्व	१०–००
परमभाव प्रकाशक नयचक्र	१०–००
पंचास्तिकाय/जिनेन्द्र अर्चना (पूजन संग्रह)	१०–००
आ० कुन्दकुन्द और उनके टीकाकार	१०–००
प्रवचन रत्नाकर भाग २, ३, ४ एवं ५	१०–००
ज्ञानगोष्ठी	७–००
तीर्थंकर महावीर और उनका सर्वोदय तीर्थ (हि.,गु., म.,क.,अं.)	७–००
सत्य की खोज [कथानक] हि., गु., म., क., त.,),	७–००
बारह भावना : एक अनुशीलन/पुरुषार्थसिद्धयुपाय	६–००
जिनवरस्यनयचक्रम्/धर्म के दशलक्षण (हि., गु., म., अं.)	६–००
क्रमबद्धपर्याय (हि., गु., म., क., त., अं.) अध्यात्मरत्नत्रय	५–००
बनारसीविलास/अर्द्धकथानक/अध्यात्मक/संदेश/छहढाला	५–००
आचार्य कुन्दकुन्द और उनके पंच परमागम	५–००
बनारसीदास विशेषांक/वीतराग विज्ञान प्रशिक्षण निर्देशिका	५–००
श्रावक धर्म प्रकाश/भक्तामर प्रवचन/बनारसीदास (कामिक्स)	५–००
गागर में सागर/चौबीस तीर्थंकर पूजन/आप कुछ भी कहो	४–००
बालबोध पाठमाला भाग १, २, ३ का सेट	३–७५
वीतराग विज्ञान पाठमाला भाग १, २, ३ का सेट	४–५०
तत्वज्ञान पाठमाला भाग १, २ का सेट	४–००
बनारसी दास : व्यक्तित्व व कर्तृत्व/चौसठ ऋद्धिविधान	३–००
चिद्विलास/परमार्थवचनिका	२–५०
णमोकार महामंत्र/विदेशों में जैनधर्म : उभरते पदचिह्न	२–००
जिनपूजन रहस्य	१–५०
मैं कौन हूँ/अहिंसा महावीर की दृष्टि में/भरतबाहुबली नाटक	१–२५

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com